सन्ध्या हाथ जोड़े हुये बोली—"जगत् पिता ! आपने इस दीनापर कृपाकी, इसको दासी अपना सौभाग्य समझती है। यदि आप इस अबला पर प्रसन्न हैं तो मुंहमांगा वर देनेकी कृपा किजिये।"

भगवान—तू अपनी इच्छाके अनुसार जो चाहे मांग सकती है। मैं तुझ पर प्रसन्न हूं, मुंहमांगा वर दूंगा।

सन्ध्या—पिता ! यदि आप सेविका पर प्रसन्न हैं तो कृपाकर यह वर प्रदान करें कि मैं संसारकी पतिव्रताओंमें सर्व श्रेष्ठ रहूं। स्वप्नमें भी पर पुरुषको ओर आँख न दौड़े। साथही यदि कोई पर पुरुष बुरे भावसे मेरी ओर दृष्टि पात करे तो वह उसी समय नपुंसक होजाय।

विष्णु—कल्याणी ! तू जैसा चाहती है वैसा ही होगा। संसारकी पतिव्रता नारियोंमें तू सर्व श्रेष्ठ रहेगी। स्त्रियां तेरा पावन नाम लेकर पतिव्रता जैसे गहन मार्गमें अग्रसर हो सकेंगी। तेरे बताये हुए नियमोंका पालन कर स्त्रियां अपना जीवन सफल करेंगी। अत्यन्त तेजस्वी पति तुझको प्राप्त होगा। लेकिन इस शरीरसे तू उनको नहीं पा सकेगी। ऋषि श्रेष्ठ मेधातिथि चन्द्र भागा नदीके किनारे यज्ञ कर रहे हैं, उनके यज्ञमें तू अपने इस शरीरको त्याग कर, तत्काल यज्ञ कुण्डसे ही तेरा दूसरा जन्म होगा। शरीर त्यागते समय तू जिसका ध्यान करेगी दूसरे जन्ममें वही तेरा पति होगा।

सन्ध्या हाथ जोड़ प्रणामकर बोली—"भक्त वत्सल ! ऋषि

यज्ञमें मैं किस तरह शरीर त्याग करूंगी? सम्भव है ऋषि श्रेष्ठ मेधातिथी मुझे ऐसा न करने दें। उसकी युक्ति आप बता देनेकी कृपा करें।"

विष्णु—पुत्री! तू इस सूक्ष्म रूपसे वहां पहुंचेगी कि ऋषि तुझको देख भी नहीं सकेंगे। यज्ञमें हवन करते समय तू हव्य रूपमें आहुतिके साथ अग्नि कुण्डमें प्रवेश कर जायगी। ऐसा होने से अग्नि भी पवित्र होगी और तू भी देह धारण कर नव जात बालिकाके रूपमें अग्नि शिखाकी गोदमें पायी जायगी। ऋषि श्रेष्ठ मेधातिथीकी दृष्टि तुझ पर पड़ेगी और वे तुझे गोदमें उठा उसी समयसे पुत्रीकी भांति प्यारसे पालने लगेंगे।

सन्ध्या—पिता! अब मेरा प्रणाम स्वीकार कीजिये और यज्ञ-स्थान पर चलनेकी आज्ञा दीजिये।

भगवान संध्याको आशीर्वाद देकर अन्तर्हित हो गये और संध्या तपासनको त्याग भगवानके बताये हुए स्थानको अग्रसर हुई।

संध्याका देह त्याग और अरुन्धती रूपमें जन्म
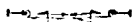
पवित्र चन्द्रभागा नदीके तटपर ही महर्षि मेधातिथिकी कुटी थी। वे अपने उग्र तपके बलसे ऋषियोंमें अग्रगण्य हो रहे थे। उनकी दिव्य मूर्तिके अवलोकनसे ही उनकी विशेषताका ज्ञान होता था, मुख मण्डलसे तो मानो साक्षात् ब्रह्मचर्यका तेज टपकता प्रतीत होता था। एक बार महर्षि मेधातिथिके मनमें यज्ञ करनेकी इच्छा हुई। तत्काल ही सबकी उपयुक्त सामग्रियोंका आयोजन होने लगा। तपस्याके प्रभावसे बातकी बातमें उनको सब वस्तुएँ प्राप्त हो गयीं। बड़े बड़े ऋषि महर्षियोंको यज्ञके लिये निमन्त्रण भेजे गये। यथा समय चन्द्रभागाके सुन्दर पुलिन पर यज्ञ करने वाले ऋषियोंने यज्ञ कार्यमें उनका हाथ बटाया आवश्यकतासे अधिक सब चीजें मँगायी गयी।

कैसी अनोखी देख पड़ती थी । उनके मुख मण्डलसे कैसी असाधारण प्रतिभा निकल रही थी, यज्ञ स्थानमें आचार्य रूपसे महर्षि मेधातिथि बैठे हुए थे । उनकी वदन ज्योतिसे प्रमाणित हो रहा था कि वे असाधारण तपस्वी और यशस्वी ऋषि हैं । यज्ञ स्थानकी पवित्रताके साथ विलक्षणता सम्मिश्रण देखनेसे ही विदित होता है । अहा ! कैसा अनोखा दृश्य और अनोखा भाव है । छल कपट धोखेका नाम भी नहीं सुना जाता । वर्तमान युगके लिये ये सब बातें असम्भव सी प्रतीत होती हैं । जहाँ यज्ञका नाम भी भुलानेकी चेष्टा हो रही है वहाँके लिये ऐसा ही हो सकता है । इन दिनों यज्ञकी चर्चा चलती भी है तो स्वार्थके सहारे । यज्ञके नाम पर भी किसी न किसी प्रकार कुछ स्वार्थ सिद्धिके यत्न अवश्य हुआ करते हैं । निस्वार्थ भावसे अपना कर्त्तव्य समझ कोई उस पवित्र कार्यकी ओर आंखें नहीं उठाते । यद्यपि इसका फल भी हाथों हाथ पा लिया करते हैं किन्तु तो भी उनकी आँखें नहीं खुलतीं ।

यथा समय महर्षि मेधातिथिके यज्ञ-स्थानमें संध्या अपने सूक्ष्म रूपमें पहुंची । यद्यपि वह यज्ञ स्थानमें सबोंको देख रही थी । किन्तु किसीने उसे नहीं देखा । यज्ञ-कार्यको देखकर वह बहुत प्रसन्न हुई । भगवान विष्णु देवके बताये हुए नियमोंके अनुसार सन्ध्या हवनकी सामग्री हो गयी और वशिष्टजीको स्वामी रूपमें ध्यान करती हुई आहुतिके साथ होम कुण्डमें प्रवेश कर गयी। सन्ध्याके स्पर्शसे अग्नि और भी पवित्र हो गयी । संध्याकी दिव्य देह भी पहलेसे अधिक तेजस्वी हो गई ।

ये हुए तबतक किसीकी दृष्टि होम कुण्डकी विशेषता पर
पड़ी थी। अचानक यज्ञके आचार्य महर्षि मेधातिथिकी
दृष्टि कुण्डकी लपलपाती हुई आग पर पड़ी। उन्होंने देखा कि
कुण्डकी लपलपाती हुई अग्नि शिखापर अत्यन्त रूपवती नव-
जात बालिका नाच रही है। महर्षि मेधातिथि उस कन्याको देख
बहुत प्रसन्न हुए और शीघ्रता पूर्वक उसे अग्निकुण्डसे बाहर
निकाल लिया तथा अपने कमण्डलके पवित्र जलसे सिक्त
किया। ऋषि मण्डलीकी दृष्टि भी बालिका पर पड़ी। वे सब
उस स्वर्गीय रूपवान बालिकाको देख बहुत हर्षित हुए।
प्रातःकालके बाल-सूर्यके समान उस नवजात बालिकाकी
शरीर कान्ति थी। यथा समय यज्ञकी पूर्णाहुति हुई। मेधा-
तिथिने आमंत्रित ऋषि महर्षियोंको उचित सत्कारके साथ
विदा किया और बालिकाको लेकर अपनी कुटीमें वापस
आ बड़े लाड़ प्यारसे उस बालिकाका प्रतिपालन करने लगे।
उस बालिकाका नाम उन्होंने अरुन्धती रखा। अरुन्धती महर्षि

था। यों तो देव नदी चन्द्रभागा पवित्र थी ही पर स्पर्शसे वह विशेष पन्न दानों और पवित्र होगई। उसकी महिम पदलेसे और अधिक बढ़ गयी। प्रति दिन प्रातःकाल जब महर्षि मेधातिथि स्नान करने जाते तो अरुन्धती भी उनके सायही जाया करती थी। जिस समय महर्षि उसे सरिताके किनारे खड़ा कर आप नदीमें स्नानार्थ उतरते थे, उस समय अरुन्धतीकी सजीव स्वर्ण प्रतिमा सी मूर्त्ति देखनेसे यही प्रतीत होता था कि आकाश का चन्द्र अपना कलङ्क मञ्जन कर चन्द्रभागामें स्नानकर किनारे खड़ा है। उस समय स्वर्गीय सौंदर्यका श्रेणी समूह बालिका-को देख किसका चित हर्षित नहीं होता। यथार्थमें अरुन्धती अंधेरे घरका प्रकाश थी। अपने रूप गुणकी समता नहीं रखती थी। अपनी उपमा आपही थी। उसके निवाससे मुनिका आश्रम स्वर्गसा प्रतीत होता था। मेधातीथि अरुन्धतीकी प्राप्ति से विशेष आह्लादित रहा करते थे।

ब्रह्मा—मैं तेरे शिष्टाचारसे प्रसन्न हूं। तुमसे सिर्फ यही कहना है कि अरुन्धतीके लालन पालनमें तुमको कष्ट होता होगा किन्तु उसकी पर्वाह नहीं करना। अरुन्धती बड़ी होनहार है, पातिव्रतके प्रभावसे संसारकी स्त्रियोंमें इसीका आसन सबसे अधिक ऊंचा रहेगा। इसका चरित्र बड़ा निर्मल और पवित्र होगा। अब तुम इसकी शिक्षाका प्रबन्ध करो। कुछ दिनोंतक किसी योग्य अध्यापिकाके अधीन रह कर शिक्षा प्राप्त करनेसे सोनेमें सुगन्धवाली कहावत चरितार्थ कर दिखायगी। यद्यपि आज इसकी अवस्था सिर्फ पांचही वर्षकी है, फिर भी यही अवस्था शिक्षाके अनुकूल है। इस अवस्थामें बालक बालिकाओंका हृदय बड़ा कोमल रहता है। अतएव इस उम्रमें जो कुछ सिखाया जायगा वह उसके हृदयपर सदाके लिये अङ्कित हो जायगा।

मेधातिथि—पिता! आज्ञा पालन करनेको तैयार हूं। कृपाकर यह बतानेका कष्ट उठावें कि अरुन्धतीको किस सती श्रेष्ठा पतिव्रताकी सेवामें अर्पण करूं?

ब्रह्मा—इन दिनों पतिव्रताओंमें सर्व श्रेष्ठ श्रीमती सावित्री और सती बेहुलाजी हैं। अतएव इन्हीं दोनोंकी सेवामें आप अपनी कन्या अरुन्धतीको शिक्षा ग्रहणके लिये भेजिये। आशा और विश्वास है, कि इनकी छायामें रह कर आपकी कन्या उपयुक्त शिक्षा लाभकर पायगी। इतना कहने बाद अरुन्धतीको ब्रह्माजी अपनी गोदमें उठाकर बोले—“बेटी! तन्मनसे शिक्षा लोगमदर

की शिक्षा प्रदान करें । आशा और विश्वास है कि आपकी संगति से उस गम्भीर विषयका तत्व इसको प्राप्त हो जायगा ।

सावित्री—सुने ! आपकी कन्या स्वयं सर्वगुण सम्पन्न होगी। आप इसको साधारण कन्या न समझें, समय पाकर यह पतिव्रताओंमें पूजनीय होगी । यदि आपका अनुरोध और जगत् पिताकी आज्ञा है तो कुछ समयके लिये इसे हम सबोंके साथ छोड़ जाइये। हम सब इसको अपनी देख रेखमें रख शिक्षा देती रहेंगी। मेरा अनुमान और विश्वास है कि अरुन्धती संसारकी पतिव्रता स्त्रियों की पथ-प्रदर्शिका होगी । इसके बताये हुए मार्गपर चलने वाली स्त्रियां अपना नारी जन्म सार्थक कर सकेंगी ।

मेधातिथि—"इसी अभिलाषासे मैं आप लोगोंकी पवित्र सेवामें इसको पहुंचाने आया हूं ।" कहकर अरुन्धतीको सावित्री के हाथ सौंप घरको वापस लौटे । उनको लौटते देख अरुन्धती बोली—"पिताजी । आप मुझे छोड़कर कहाँ जा रहे हैं ? आपके बिना यहां कैसे रहूंगी ।" मेधातिथि अरुन्धतीको अनेक प्रकार संबोध कर सावित्री तथा बेहुला देवीके हाथ सौंप वहांसे चल पड़े ।

महर्षि मेधातिथिके वापस आनेपर अरुन्धती सावित्री और बेहुलाके साथ रहने लगी, वे दोनों उसे अपनी पुत्रीके समान प्यारकी दृष्टिसे देखा करती थीं । शिक्षा दीक्षाका भी श्रीगणेश कर दिया गया । अरुन्धती अपने अपूर्व पूर्व संस्कारके बल अलौकिक प्रतिभावान थी। जिस गहन मार्गमें साधारण स्त्रियोंका

सन्न रहा करती थी। वे सब क्रमशः अपनी अपनी सुना
गया करती थीं, तदन्तर वह उनकी बातोंका उत्तर
ना आरम्भ किया करती थी। अरुन्धतीकी स्मरण शक्तिको
ख देख कन्याओंको बड़ा आश्चर्य हुआ करता था। वे सब सम-
ती थीं कि अविवाहिता अरुन्धतीमें इतना अनुभव होना अनु-
नके बाहरकी बात है। एक दिन उपवनमें कुछ आगे बढ़ने पर
रेवती नामक एक युवतीने अरुन्धतीसे कहा—"बहिन। तेरी
संगतिसे मुझको बड़ा लाभ हुआ पहलेकी अपेक्षा मेरे मनके
भावमें आशासे अधिक परिवर्तन हुआ, किन्तु अब भी मुझमें कई
ऐसे दुर्गुण भरे हुए हैं कि शीघ्र दबते ही नहीं। स्वामी-सेवाको
प्रधान कर्त्तव्य समझकर भी घरेलू झंझटोंके आगे कुछ नहीं करते
बनता। ननद जेठानियोंकी जहरीली चुटकियां सर्वाङ्ग शरीरमें
जलन पैदा किये देती हैं। उनकी तानेभरी तीक्ष्ण बातें तेज बाण
के समान हृदयको बेधे डालती हैं। स्वार्थकी मात्रा इतनी अधिक
है कि किसीकी भलाई सूझती ही नहीं। सास ससुरकी बातें
भी असह सी प्रतीत होती हैं। इन सब दुर्गुणोंको दबानेकी

समभ-पाली योग्य विदुषी हो गयी। अपनी छात्राकी परि-जित बुद्धि और अलौकिक चमत्कार पर सावित्री अभिमान करने लगी। इसी प्रकार शिक्षा सोपानपर पैर बढ़ाते बढ़ाते अरुन्धती ने बाल्यावस्थाकी सीमाको अतिक्रम कर किशोरावस्थामें प्रवेश किया। किशोरावस्थामें कदम रखतेही उसकी रूपावली खिल गयी। उसका दिव्य मुख-मण्डल निष्कलंक पूर्ण चन्द्रमासा चमकने लगा। उसकी कमल जैसी बड़ी बड़ी सुन्दर आंखें मृगाकी आंखोंसे बाजी मार रही थीं। काले काले रेशमसे कोमल केश लटें काली काली नागिन सी लटकती हुई प्रतीत होती थीं। सिंहनीसी पतली कमर चलनेके समय बल खा जाया करती थी। खिले हुए अरूण कमल जैसे कर-पल्लव अत्यन्त अनोखे दिखायी पड़ते थे। वह अपनी स्वाभाविक सुरीली बोलीसे कल कण्ठा कोकिलाको भी लज्जित किये देती थी। दो तीन समवयस्का देव-कन्याएं भी सखी रूपमें अरुन्धतीके साथ लगी रहती थीं। उन सबोंको उसके साथ निश्छल प्रेम होगया था। जिस समय अरुन्धतीको शिक्षासे अवकाश मिलता उस समय वह अपनी उन सखियोंके साथ मिलकर धर्म चर्चा और नारी कर्त्तव्यकी बातोंपर तर्क-वितर्क किया करती थी। वायु सेवन तथा मन बहलानेको उन सखियोंके साथ तपोवनकी ओर भी आया करती थी। उनकी वे सखियां प्रायः नव विवाहिता थीं। अवस्थामें छोटी होने पर भी वे सब अरुन्धतीको अपना ज्ञान गुरु ——— करती थीं। वह भी उन सबोंके साथ बातें

अरुन्धती—यदि न घबड़ाओ तो सब कार्य धीरे धीरे सिद्ध हो जायेंगे। अभी इसके लिये कुछ समय चाहती हूं। मुझको कई बातोंका पता लगाना है। पाछे इसकी युक्ति बताऊंगी।

वेदवती—क्या यह बताओगी कि ब्राह्मणों पर लक्ष्मीकी दया क्यों नहीं होती, दरिद्रता उनका पिण्ड क्यों नहीं छोड़ती?

अरुन्धती—लक्ष्मीजी पतिव्रताओंमें प्रधान है इसीलिये ऐसा करती हैं।

वेदवती—पतिव्रताका हृदय कोमल हुआ करता है कठोर नहीं।

अरुन्धती—पतिव्रता पतिका अपमान देख नहीं सकती चाहे उसका हृदय कितनाही कोमल क्यों न हो।

वेदवती—ऐसा तो होना ही चाहिये।

अरुन्धती—इसीलिये लक्ष्मीजी ब्राह्मणोंसे असंतुष्ट रहा करती हैं। पतिका अपमान करनेवाला समझ उनसे बहुत दूर रहा करती हैं।

वेदवती—ब्राह्मणोंने उनके पतिका अपमान कैसे किया?

अरुन्धती—तुम्हें ज्ञात नहीं कि भृगुजीने भगवानके हृदयमें लात लगायी थी? भगवानने तो ब्राह्मण देवताके चरण प्रहारको प्रसन्नता पूर्वक सह लिया किन्तु लक्ष्मीजीसे पतिका वह अप-मान सहा नहीं हुआ। सुनती हूं, उसी दिनसे ब्राह्मणोंसे वह असन्तुष्ट रहा करती हैं।

वेदवती—हो सकता है, वे पतिव्रताओंके अनुकूल कार्य है,

पवित्र मार्गके बाधक हैं । अज्ञात गतिमें गिरी रहनेसे यह ह्रि मार्ग दिखायी ही नहीं पड़ता । अपनी ननद जेठानी और इनके साथ पवित्र श्रद्धा भक्तिका व्यवहार किया जाय तो निश्चय उ का फल भी स्नेह संपुट हुआ करेगा । वे भी तुम्हारे साथ प्रे करेंगी । विश्वास रहे जो कार्य प्रेमके बल अनायास सिद्ध हैं हैं वे और किसी प्रकार उस तरह सिद्ध हो ही नहीं सकते। औ व्यक्ति रोब-दाब और लड़ाईसे कार्य सिद्ध करना चाहते हैं, व दिखाकर कार्य लेना चाहते हैं, वे कभी कृत-कार्य नहीं होते हैं। किसी प्रकार कार्य सिद्ध भी हो गया तो उसमें प्रेम ही नहीं रहता। इन सब बातोंकी ओर ध्यान देनेसे तुमको पता लग जायगा।"

वेदवती—बहिन ! तुम्हारे उपदेशके अनुसार कार्य करनेको तैयार हूं । किन्तु फिर भी ननद जेठानियोंके आचरणसे कुछ भी धैर्य नहीं धर सकती हूं। उनकी जली कटी बातें सुनकर क्रोध हो आया करता है। पद पदमें वे सब अकारण कष्ट पहुंचाया करती हैं। यदि उनसे बचनेकी कोई युक्ति हो तो कृपाकर शीघ्र बताओ। यद्यपि मैं पहली बार ससुराल गयी, किन्तु इसी पहली यात्रामें उन सबोंने मेरा चित्त मानो सा टपडाकर दिया। मेरी जेठा- नीजी झूठी बातोंसे अपने पूज्य पतिजीका कान भरती रहती हैं और वे भी ऐसे महात्मा हैं कि स्त्री वाक्यको वेद वाक्य समझ बैठते हैं। सम्भव है बहुत शीघ्र इस प्रकार भाई भाईमें बिगाड़ हो जायगा। यों तो प्रभुओं पर लक्ष्मीजी कृपा करती ही नहीं फिर आगाको …ने इससे कैसी अवस्था होगी यह अनुमानगम्य है।

फिर भी लक्ष्मीने दयाकी जो प्रसन्नताको उनके हृदयांश दूर कर दिया ।

अरुन्धती—होद्दवती ! अभी तुम्हें यही कहना है कि तू मनर अवश्य जेठानीके वचन वाणोको धीरताके साथ सहन किया कर । अवसर आयगा कि सच्ची बात निकल आयगी । द्वेषका दमन नहीं होता है । अग्निके अङ्गारोंसे लप लगाती है अग्नि शिखा ठंढी नहीं हो सकती । अतएव तेरी सहन-शीलताही तुम्हें सफलता प्राप्त करायगी ।

होद्दवती—यों तो जेठजी अच्छे विद्वान और प्रशंसनीय बुद्धिमान पुरुष हैं, किन्तु उस समय उनकी उज्वल बुद्धि न मालूम क्यों धुंधली हो जाया करती है । इस ओर विचार करनेपर मुझे अपने अभाग्य पर आंसू बहाना पड़ता है ।

अरुन्धती—यही तेरी भूल है । संसार कार्य-क्षेत्र है इसमें कार्य करनेवालेको अवश्य उसके कर्मानुसार फल प्राप्त हुआ करते हैं । हां ! शोक दुःखादीकी कसौटीमें कसते समय अधीर होनेसे खरा उतरना महा असम्भव है । अभी इस विषयमें सिर्फ इतना ही कहना है । विशेष बातें फिर कहुंगी ।

विलक्षण शोभा देखती रहनेके बाद एक सखी बोली—"सखी अरुन्धती! माधवीलताकी शोभा किसी सुन्दर सुडौल वृक्षका आश्रय लेनेहीसे अधिक बढ़ती है।"

अरुन्धती मुसकुराती हुई बोली—"खेद है कि तूने तर्क शास्त्र का अध्ययन नहीं किया।"

सखी—तर्क शास्त्रको पढ़कर वितर्ककी वितण्डासे बड़ी गड़बड़ी मच उठती है।

अरुन्धती—गीता! मैंने तेरे प्रेमका मतलब नहीं समझा। साफ शब्दोंमें समझाकर कहो।

गीता—मैंने ऐसी टेढ़ी सीधी बातें नहीं कहीं। जो कुछ है तेरे आगे है साफ साफ समझ ले। "माधवीलता सुडौल वृक्षके आश्रयमें शोभा पाती है" इसमें कौनसी बात समझमें नहीं आती?

अरुन्धती—इसका मतलब साफ शब्दोंमें कह, क्या कहना चाहती है?

गीता—यही कि तू किसी पुरुष पुङ्गवका आश्रय ग्रहण कर। अब बाल्यावस्थाकी सीमा पार कर किशोरावस्थामें पहुंची हो। क्या इसी समयसे योगिनी होना चाहती हो?

अरुन्धती हँसती हुई बोली—"गीता! मेरे लिये बड़ा चिन्ता करने चली हो, अपना स्मरण है या नहीं?"

गीता—सच्ची सखी वही कही जा सकती है जो अपनी सखी के दुःखसे दुःखी हो। अब मुझसे तुम्हारी यह असह्य यातना देखी नहीं जाती।

थी। और यह बता सकती हैं कि मनोरमा यहांसे कितनी दूर रहा करती है?

सीता—चन्द्रभागा नदीके किनारे ही रहा करती है। यहांसे दूर नहीं है।

अरुन्धती—यहांसे दूर नहीं हो सकती है क्योंकि हम सब इस स्थानसे दूर निकल आयी हैं। चन्द्रभागा जैसी पवित्र नदीके पुलिन पर रहने वाली स्त्रियोंका ऐसा स्वभाव! उस पवित्र नदीके किनारे रहनेवाले जीव तो ऐसे अनुदार नहीं होते।

सीता—मैंने कुछ भूलकी चन्द्रभागा नहीं चन्द्रा नदी जो यहांसे बहुत निकट है उसीके किनारे रहा करती है। मेरा अनुमान है कि यहांसे बहुत निकट है।

अरुन्धती—क्या उससे भेंट हो सकती है? यदि हो तो कहां और कैसे?

सीता—जब इच्छा करो तभी भेंट हो सकती है। वह मेरी प्यारी सखी है। कहनेके बाहर नहीं होगी।

अरुन्धती—इस समय हम दोनोंके साथ देवदर्शनका रहना भी आवश्यक है। इसी पवित्र पर्वत पर हम लोगोंके साथ उसको मिलाओ। मैंने कुछ समयके लिये राजा सतियों और देवताओंसे अलग पर्वतपर रहनेकी इच्छा ठानी है अतएव कुछ समय पर्वत परसे यहांकी अलौकिक शोभा देखनी चाहिये।

अच्छा स्मरण दिलाया ! वेदवतीके लिये अवश्य चिन्ता हो रही है। क्या तुझे उसके विषयमें कुछ मालूम है ?

गीता—वेदवतीकी जेठानी मेरी सङ्गिनी है। उसका स्वभाव उतना बुरा नहीं है लेकिन शिक्षासे दूर रहनेके कारण हठीलापन और नासमझी अवश्य किया करती है। मेरे अनुमानसे इस नासमझीके कारण वह वेदवतीसे विवाद किया करती है। जो उसके स्वभावको भली भांति पहचान सकेगा उसको उससे विवादकी आशङ्का नहीं रहेगी। पतिके साथ भी उसका व्यवहार अच्छा नहीं होता। खरी खोटी कहना उसका स्वभाव है। उसके पूज्य पति देव शुद्ध सात्विक ब्राह्मण हैं। अत्यन्त शुद्ध होना भी दोष है। मनोरमा अपने पतिको जो कुछ कह दिया करती है वे उसी पर विश्वास कर बैठते हैं। वेदवतीके स्वामी की जितनी प्रशंसाकी जाय सब थोड़ी है। भोजनादिका प्रबन्ध अतिथी-सेवा पिता माताकी आज्ञाका पालन करना वे अपना कर्तव्य समझा करते हैं। भाई और भाभीके साथ भी उनका वैसाही उच्च विचार और श्रद्धा भाव है। वेदवती सास ससुरकी सेवामें कभी पीछे पैर नहीं रखती। जेठानीकी आज्ञा पालनमें भी कुछ विलम्ब नहीं करती फिर भी मनोरमा उससे प्रसन्न नहीं रहती।

अरुन्धती यदि ऐसा ही है तो भी तुम ठीक राह पर उसीका ध्यान नहीं करती। इसके पहले तुमने इस विषयमें मुझसे कभी कुछ नहीं कहा था। छेड़ने पर अभी कुछ कमी क्या तुम्हा

गयी। और यह बता सकती है कि मनोरमा यहांसे कितनी दूर रहा करती है?

गीता—चन्द्रभागा नदीके किनारे हो रहा करती है। यहांसे दूर नहीं है।

अरुन्धती—यहांसे दूर नहीं हो सकती है क्योंकि हम सब अपने स्थानसे दूर निकल आयी हैं। चन्द्रभागा जैसी पवित्र नदीके पुलिन पर रहने वाली स्त्रियोंका ऐसा स्वभाव! उस पवित्र नदीके किनारे रहनेवाले जीव तो ऐसे अनुदार नहीं होते।

गीता—मैंने कुछ भूलकी चन्द्रभागा नहीं चन्द्रा नदी जो यहांसे बहुत निकट है उसीके किनारे रहा करती है। मेरा अनुमान है कि यहांसे बहुत निकट है।

अरुन्धती—क्या उससे भेंट हो सकती है? यदि हो तो कहां और कैसे?

गीता—जब इच्छा करो तभी भेंट हो सकती है। वह मेरी प्यारी सखी है। कहनेके बाहर नहीं होगी।

अरुन्धती—इस समय हम दोनोंके साथ देवदर्शनका उत्तम ही अवसर है। इसी पवित्र दर्शन पर हम लोगोंके साथ इसको मिलाइये। मैंने कुछ समयके लिये शान्त मूर्तियों और देवताओं से [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है [illegible] कुछ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] होता देखने लगीं।

अच्छा स्मरण दिलाया! वेदवतीके लिये भयरा किया है रही है। क्या तुझे उसके विषयमें कुछ मालूम है?

गोता—वेदवतीकी जेठानी मेरी सङ्गिनी है। उसका स्वभाव उतना बुरा नहीं है लेकिन शिक्षासे दूर रहनेके कारण हठीलापन और नासमझी अवश्य किया करती है। मेरे अनुमानसे इसी नासमझीके कारण वह वेदवतीसे विवाद किया करती है। जो उसके स्वभावको भली भांति पहचान सकेगा उसको उससे विवादकी आशङ्का नहीं रहेगी। पतिके साथ भी उसका व्यवहार अच्छा नहीं होता। खरी खोटी कहना उसका स्वभाव है। उसके पूज्य पति देव शुद्ध सात्विक ब्राह्मण हैं। अत्यन्त शुद्ध होना भी दोष है। मनोरमा अपने पतिको जो कुछ कह दिया करती है वे उसी पर विश्वास कर बैठते हैं। वेदवतीके स्वामी की जितनी प्रशंसाकी जाय सब थोड़ी है। भोजनादिका प्रबन्ध अतिथी-सेवा पिता माताकी आज्ञाका पालन करना वे अपना कर्तव्य समझा करते हैं। भाई और भाभीके साथ भी उनका वैसाही उच्च विचार और श्रद्धा भाव है। वेदवती सास ससुरकी सेवामें कभी पीछे पैर नहीं रखती। जेठानीकी आज्ञा पालनमें भी कुछ विलम्ब नहीं करती फिर भी मनोरमा उससे प्रसन्न नहीं रहती।

अरुन्धती यदि ऐसा ही है तो भी तुम ठीक राह पर लानेका यत्न नहीं करती। इसके पहले तुमने इस विषयमें मुझसे कभी कुछ नहीं कहा था। छेड़ने पर अभी कुछ लम्बी कथा सुना

गयी। और यह बता सकती है कि मनोरमा यहांसे कितनी दूर रहा करती है ?

गीता—चन्द्रभागा नदीके किनारे हो रहा करती है। यहांसे दूर नहीं है।

अरुन्धती—यहांसे दूर नहीं हो सकती है क्योंकि हम सब अपने स्थानसे दूर निकल आयी हैं। चन्द्रभागा जैसी पवित्र नदीके पुलिन पर रहने वाली स्त्रियोंका ऐसा स्वभाव। उस पवित्र नदीके किनारे रहनेवाले जीव तो ऐसे अनुदार नहीं होते।

गीता—मैंने कुछ भूलकी चन्द्रभागा नहीं चन्द्रा नदी जो यहांसे बहुत निकट है उसीके किनारे रहा करती है। मेरा अनुमान है कि यहांसे बहुत निकट है।

अरुन्धती—क्या उससे भेंट हो सकती है ? यदि हो तो कहां और कैसे ?

गीता—जब इच्छा करो तभी भेंट हो सकती है। वह मेरी प्यारी सखी है। बहनेके बाहर नहीं होगी।

अरुन्धती—उस समय हम दोनोंके साथ वेदवतीका रहना भी आवश्यक है। उसी पवित्र पर्वत पर हम तीनोंके साथ उसको मिलाओ। मैंने कुछ समयके लिये माता सावित्री और वेदुलाजी से मनसा पर्वतपर रहनेकी आज्ञा मांगली है अतएव कुछ समय तक पर्वत परसे यहांकी अलौकिक शोभा देखती रहूंगी।

अच्छा स्मरण दिलाया ! वेदवतीके लिये अवश्य चिन्ता हो रही है। क्या तुझे उसके विषयमें कुछ मालूम है ?

गीता—वेदवतीकी जेठानी मेरी सङ्गिनी है। उसका स्वभाव उतना बुरा नहीं है लेकिन शिक्षासे दूर रहनेके कारण हठीलापन और नासमझी अवश्य किया करती है। मेरे अनुमानसे इसी नासमझीके कारण वह वेदवतीसे विवाद किया करता है। जो उसके स्वभावको भली भांति पहचान सकेगा उसको उससे विवादकी आशङ्का नहीं रहेगी। पतिके साथ भी उसका व्यवहार अच्छा नहीं होता। खरी खोटी कहना उसका स्वभाव है। उसके पूज्य पति देव शुद्ध सात्विक ब्राह्मण हैं। अत्यन्त शुद्ध ...ना भी दोष है। मनोरमा अपने पतिको जो कुछ कह दिया ...ती है वे उसी पर विश्वास कर बैठते हैं। वेदवतीके स्वामी ... जितनी प्रशंसाकी जाय सब थोड़ी है। भोजनादिका प्रबन्ध ...थी-सेवा पिता माताकी आज्ञाका पालन करना वे अपना ...र समझा करते हैं। भाई और भाभीके साथ भी उनका ...ही उच्च विचार और श्रद्धा भाव है। वेदवती सास ससुरकी ...ें कभी पीछे पैर नहीं रखती। जेठानीकी आज्ञा पालनमें

मनोरमाकी माया।

मनोरमा अपनी कुटीमें अपने पूज्य पतिके आगे बैठी हुई उन पर वाक्य-बाण बरसा रही है और उनके पूज्य पति हृषिकेशजी सिर नीचे किये सब सह रहे हैं। उनके बहुत समय तक मौन रहने पर मनोरमा बिगड़कर बोली—"आपके आगे घण्टोंसे मैं अपना रोना रो रही हूं किन्तु आपका हृदय नहीं पसीजता। आप के अनुज दिन दहाड़े अत्याचार करें और आपके मुखसे बात भी न निकले। यदि ऐसा ही स्वभाव था तो भले ही भाईके लालन पालनमें रहकर बदलेमें लात गाली सहते रहते। मुझसे ऐसा अन्याय नहीं देखा सुना जायगा। वे घरका कार्य करते हैं अवश्य, लेकिन उसका मतलब यह नहीं कि उसके बदले मैं उनकी तीखी दृष्टिपर चढ़ी रहूं।"

हृषिकेसजी बोले—"प्यारी! संसारमें भाईके समान प्रिय दूसरी वस्तु नहीं है। मैं तुम्हारी बातोंपर कैसे विश्वास करूं? मेरा अनुज मेरे प्रति किसी प्रकारका बुरा भाव ध्यानमें लावे यह कभी सम्भव नहीं। मैंने उसे श्रद्धा भक्तिके साथ अपनी और तुम्हा सेवा करते पाया है। मैं तुम्हारे कहनेमें पड़कर ऐसे भाई कभी नहीं त्याग सकता मुझको विश्वास है कि मानभंजन और अनुज किसीको सौभाग्यसे ही मिलता होगा। तब यदि तुम्हा

इच्छा उसके साथ रहनेकी नहीं है तो अलग होकर रहो किन्तु मैं अपने अनुजके साथ रहूंगा।"

पतिके मुखसे इतनी बातें सुनतेही मनोरमाका मुख क्रोधसे तमतमा गया। वह भूखी सिंहनी सी कड़क कर बोली—"आप अपने भाईके लिये जीते मरते रहें मैं अपने पिताके घर जाती हूं। अब इस घरमें रहना मेरा कदापि नहीं होगा।"

इसके बाद वह अपनी गठरी संभाल आगे निकलनाही चाहती थी कि हरिकेशजी भयभीत हो उसके आगे विनय करने लगे—"प्यारी मनोरमा! क्षमा करो मुझसे भूल हुई। मैं तुम्हारा अपमान नहीं करना चाहता। जैसी आज्ञा दो वैसाही करनेको तैयार हूं। यदि मानमंजनसे अलग रहनेमें ही कुशल समझती हो तो आज ही उससे अलग हो जाता हूं किन्तु ऐसा करनेके पहले पुनः इसपर एकबार विचार लेना अच्छा होगा, मानमंजन य उसकी धर्मपत्नीमें जो दोषहो उसको दूर करनेकी चेष्टा करनी चाहिये लेकिन उनके जैसे बिना वेतन पानेवाले दासी दासको अलग करना ठीक नहीं होगा। इसमें अपनी हानि अधिक है, लोकापवादकी ओर भी विचार करो और अपने कष्टका भी अनुमान करो। यदि इन सब बातोंको विचारने पर भी मानमंजनको अलग करनेका ही निर्णय होगा तो अभी उसको अलग कर दूंगा।"

पतिके मुखसे भाई अलग कर देनेकी बात सुनकर मनोरमाका क्रोध कुछ कम हुआ। वह तीक्ष्ण स्वरसे बोली—"मानमंजनको अलग करने पर ही मैं इस घरमें रह सकूंगी।"

हृषिकेश—अलग होनेसे भोजनका प्रबन्ध कैसे होगा? पिता माताकी सेवा कौन करेगा? मुझको अध्यापकीसे अवकाशही नहीं मिलता है।

मनोरमा—घवड़ाओ नहीं अध्यापक जी! यदि तुम्हारी बुद्धि बालकोंको पढ़ानेमें निपट जाती है तो और कार्य मेरी बुद्धिसे किया करो। अभी मैं तुम्हें सब बताये देती हूं।

हृषिकेश—अबसे तुम्हारे कहनेके अनुसार ही चला करूंगा। कहो क्या करनेको कहती हो?

मनोरमा—मैं भी भली प्रकार समझती हूं कि मानभंजन हम सबोंको सेवाको अपना कर्त्तव्य समझता है। कभी भूलकर भी इन कार्योंसे उसे दुःख नहीं होता। आप उसे जैसी आज्ञा देंगे उसके पालनमें वह कभी विलम्ब नहीं होने देगा।

हृषिकेश—इसलिये मैं कह रहा था कि उसके जैसा भाई किसीको सौभाग्यसे मिलता होगा। अब तुमको विचारना चाहिये कि उसको अलग करनेसे हम सबोंका लाभ है या हानि? आचार्यके समान भक्तिसे देखता है और सेवकसे बढ़कर हृदयसे सेवा करता है। अतएव उसके अलग होनेसे कष्टकी मात्रा बहुत अधिक बढ़ जायगी।

मनोरका—वह लड़का तो सपूत है, उससे हम सबोंको बहुत आराम मिलता है किन्तु जिस दिनसे उसकी धर्म पत्नी आयी उस दिनसे उसमें परिवर्तन होने लगा है। सम्भव है पश्चाताप करने के अतिरिक्त और कुछ हाथ ही न लगे। इसलिये अभीसे यत्न

करनेके लिये कहती हूं उसकी धर्मपत्नी वेदवती उसको देवतासे अधिक आदरसे देखती है। अपनी सच्ची सेवासे स्वामीको सन्तुष्ट किये रहती है। सम्भव है ऐसी सेवासे वह पतिके कहनेमें आकर हम सबोंका निरादर करना आरम्भ कर दे। यदि सेवककी भी उचितसे अधिक सेवा होने लगे तो सम्भव है वह अपने सेव्यकी सेवामें त्रुटि दिखाने लगे। वेदवतीके आनेके पहले मानभंजनका जैसा स्वभाव था अब वैसा नहीं है। कुछ कुछ परिवर्तन होने लगा। अब अवकाशके समय वेदवती उसके पैर दबाती है, स्नान कराती और धोती फीचती है। इस प्रकार स्त्रीसे सम्मानित रहनेसे उसके स्वभावमें परिवर्तन होना स्वाभाविकही कहा जा सकता है। इसलिये मेरा विचार है कि ऐसी कोई युक्ति निकाली जाय कि वेदवती उससे अलग होजाय। बस, सब ठीक हो जायगा फिर हम सबोंके सुखके मार्गमें कांटे नहीं बिछेंगे। घरका भोजन भी मैं बना लिया करूंगी और सब कार्य मानभंजन कर लिया करेगा।

हरिश्चंद्र—प्यारी! स्वार्थका पर्दा आंखसे हटाकर देखो। वेदवती सच्ची पतिव्रता है। उसको किसी प्रकारका कष्ट पहुंचानेकी मङ्गलकी आशा मत करना। यदि सच्चे हृदयसे वह स्वामीकी सेवा करती है तो तेरा क्या बिगड़ता है? उसको पतिसे अलग कर तुम सुखकी आशा न करो! क्योंकि तुम्हें पतिव्रताका प्रभाव मालूम नहीं हुआ है। मेरी बातोंकी ओर भी ध्यान दो अपने म्हपर आगे मत रहो। विचार कर कार्य करना चाहिये।

मनोरमा—अजी लजाते या डरते क्या हो? अभी मानमंजन को बुलाकर कह दो "कल वेदवतीको पिताके घर भेज दें। अभी उसकी अवस्था कम है। यहां उसको बड़ी तकलीफ होती है, दूसरेकी लड़की है तो क्या? उसके सुख दुःखका अनुमान भी तो करना चाहिये।" इतनेसे ही काम हो जायगा। सांप भी मर जायगा और लाठी भी नहीं टूटेगी।

अध्यापक हृषिकेशजीने इच्छा नहीं रहने पर भी मानमंजनको बुलाकर सब बातें कह दीं। भाईकी आज्ञा पाकर मानमंजनने अपनी धर्म पत्नी वेदवतीको सब बातें कहीं जिन्हें सुनकर वेदवती बोली—"नाथ! आप मुझको अपनी सेवासे वंचित न करें। विचार कर देखें पति सेवाके अतिरिक्त स्त्रीका और कर्तव्य क्या है। मैं आपके बिना स्वर्गमें भी सुखी नहीं रह सकती। पिताके घरमें मुझे सच्चा सुख नहीं मिल सकता। अतएव दासीको सेवासे वंचित न कीजिये। मैं वहां सुखी नहीं रहूंगी"

मानमंजन—प्यारी, मेरी इच्छा भी नहीं है कि आपको ओटमें मुझे रहने दूं, किन्तु पिताके समान अनुजकी आज्ञा टालनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। मैं तेरी सेवासे बहुत सुखी रहा करता था किन्तु ईश्वरको यह स्वीकार ही नहीं था। अभी तुझे वहां जाना ही पड़ेगा। पीछे उनकी आज्ञानुसार मंगवा लूंगा।

वेदवतीके बहुत आग्रह करने पर भी मानमंजनने उसकी प्रार्थना नहीं स्वीकार की। अन्तमें विवश होकर वेदवती पिताके घर जानेको तैयार हुई। बड़ी प्रसन्नताके साथ मनोरमाने उसे

विदा करनेकी तैयारी की। मुँहपर चिकनी चुपड़ी बातोंसे उसको प्रसन्न करना चाहा, किन्तु प्रसन्न नहीं कर सकी। वह उसको पहले ही ताड़ गयी थी, कुछ बोली नहीं। दूसरे दिन वेदवती पिताके घर भेज दी गयी।

उसको विदाकर मनोरमा सुखसे रहने लगी। हृषिकेशजी अध्यापकी करते थे और मानभंजन गृहस्थीके सब कार्योंको संभालता था। भोजनके अन्न-जल, फलमूल ईन्धन और पत्रादि संग्रह करना उसीका कर्त्तव्य था, मनोरमा किसी प्रकार भोजन भर तैयार कर टांग फैलाये सोई रहती थी। किसी बातकी उसे चिन्ता फिकर थी ही नहीं। इस प्रकार कुछ दिनोंतक वह अपना समय बिताती रही। मानभंजन जिस श्रद्धा-भक्तिसे पिता माताकी सेवा किया करता था उससे किसी अंशमें कम भाई और भाभी-की सेवा नहीं करता था। यद्यपि इस कार्यमें उसे कष्ट अधिक हुआ करता था, किन्तु कभी भूलकर भी कष्टका नाम मुखपर नहीं लाता। भाईकी अवस्थापर हृषिकेशजीको बड़ा दुःख होता था किन्तु अपनी धर्मपत्नीके भयसे इस विषयमें जीभ भी नहीं हिला पाते थे। मनोरमा इतने पर भी पूरी प्रसन्न नहीं रही, मानभंजनको खरी खोटी सुनाया ही करती थी, किसी कार्यमें विलम्ब होनेसे वह उसपर बिगड़ बैठती थी। हृषिकेशजीकी माताके पुत्रपर किये हुए अत्याचार लड़कने लगे। उन्होंने कई बार मनोरमासे इस विषयमें कहा, किन्तु उसका ध्यान उस ओर आकर्षित ही नहीं हुआ।

को गलीचेका भ्रम हो जाया करता था। हरी भरी लहलही दूर्वोंकी सब्जियोंसे सजे मैदानमें मखमली कालीन बिछी मालूम होती थी। पर्वतकी नुकीली चोटियां बर्फसे ढकी चांदीकी शिलाओंसी चमकती थीं उनपर दिवाकरकी दिव्य किरणें अपूर्व तेज दिखा रही थीं। विविध प्रकारके वन विहङ्गोंकी बोली हृदयमें अमृतकी डली घोल रही थी। सुमनोंके साथ अठखेलियां करता हुआ समीर सौरभसे वनको सुवासित करनेकी चेष्टा कर रहा था। प्रेमी भ्रमर खिले फूलोंकी गोदमें लोट पोट हो रहे थे। अहा! कैसा अनोखा दृश्य था। कैसा चोखा भाव था! अरुन्धती इस दृश्यको देखकर गीता और वेदवतीके साथ पर्वतके प्राङ्गणमें एक सुन्दर पुष्करिणीके स्वच्छ घाट पर बैठ उसका दृश्य देखना ही चाहती थी कि निकटकी एक बड़ी झाड़ीमें लहलहाती हुई दावाग्नि पर दृष्टि पड़ी। कौतूहलवश अरुन्धती अपनी सखियोंके साथ उस अग्नि क्रीड़ा-स्थलकी ओर बढ़ी। निकट पहुंचने पर उसे करुण-क्रन्दन सुन पड़ा। ध्यानसे सुनने पर मालूम हुआ कि किसी अबलाका आर्त्तनाद है। बड़ी तेजीसे आगे बढ़ निकट जा देखा कि चारों ओर दावाग्निसे घिरी हुई लपटोंके बीच एक युवती और युवक छटपटा रहे थे। युवक निश्चेष्ट पड़ा था और युवती "बचाओ! बचाओ!" कहती, चिल्लाती और चित्कार कर
अग्नि शिखा चारों ओरसे बढ़ती हुई दोनोंको
लपेटना चाहती थी। ज्यों ज्यों अग्निकी लपटें

यदि उनके आनेमें अधिक देर हुई तो उनके आनेके पहले ही तुम को मेरे साथ चलना पड़ेगा।

मानभञ्जन—किन्तु पिता मातासे आज्ञा ले लेनी पड़ेगी।

मनोरमा—मैं उनसे आज्ञा लेचुकी हूं।

मानभंजनने शीघ्रता पूर्वक भोजन किया, तब तक ह्रषिकेशजी भी आगये। मनोरमाने मानभंजनके सामने ही अपनी सारी कहानी कहकर चलनेकी इच्छा प्रकट की। स्वामीको दो दिनके लिये आश्रममें रहनेका आग्रह कर, अवकाशकी स्वीकृति पाकर, देवरके साथ मानस पर्वतकी ओर चली। मानभंजन चुपचाप उसके आगे आगे चला। मार्गमें विना प्रयोजन वह किसी से कुछ बोला भी नहीं। मनोरमा गीताकी दासीके साथ बातें करती जा रही थी।

अरुन्धती गीता और वेदवतीके साथ मानस पर्वतके लता-कुंजों तथा पुष्प-पादपोंकी शोभा देख रही थी। उस अनुपम मानस पर्वतकी शोभा बड़ी विलक्षण और चित्ताकर्षक थी। जान पड़ता था कि ऋतुराज वसन्तने उसको अपना क्रीड़ा-क्षेत्र बना रखा है। उसपर उसका अटल साम्राज्य स्थापित हुआ सा दिखता था। ऐसे अनुपम दृश्यको देख चित्त प्रसन्न होना स्वाभाविक है। छोटी २ लतायें लता-कुंजों पर लहराया करती थीं। जिन्हें अध-खिले सुमन समूहोंसे पुष्प पादप वनकी प्राकृतिक परिचय दे रहे थे। कम ऊंची और समान शाखाओंमें अनेक प्रकारके गमा-... ऐसी सुन्दरतासे सजे थे कि निकट आनेपर भी दर्शकों

लपकती आती, त्यों त्यों युवती युवकके निकट सटती जाती थी। उस अग्निकी चहार दिवारीसे निकल आना असम्भवसा हो गया था, युवक खड़ा खड़ा भगवानका ध्यान कर रहा था। जीवनकी आशा छोड़ अपने अन्त समयकी प्रतिक्षा घोर चिन्ताके साथ कर रहा था। युवती जोरसे चिल्ला रही थी। उसी अवसर पर गीता और वेद्वतीके साथ अरुन्धती भी वहां पहुंच गयी। वेद्वतीने उनके कण्ठ स्वरको पहचानकर अरुन्धती से कहा—"सखी! यह मेरी जेठानीका स्वर मालूम होता है। गीताने गौरसे सुनकर कहा "सचमुच उसीका कण्ठ स्वर है।"

मानभंजनके साथ मनोरमा पर्वत पर आरही थी, पर्वत पर आने पर ध्यान किसी ओर रहनेके कारण उस दावाग्निके किलेमें घिर गयी उससे निकलनेकी कोई युक्ति न देख प्राण-भयसे अधीर हो रही थी। वेद्वतीने आगकी भिनी लपटोंसे झांक कर देखा, अर भी भाभीके साथ खड़े मानभञ्जन हरि नाम जप रहे हैं। वेद्वती पति को विपत्तिमें फंसा देख बोली—"जब पतिदेवही अग्नि-कुण्डमें जल मरेंगे तो इस तुच्छ जीवनसे मैं ही कौनसा लाभ उठाऊंगी! इसके बाद हाथ उठाकर ईश्वरको साक्षी रखकर बोली—"ईश्वर! यदि मैंने स्वप्नमें भी पर पुरुषकी ओर आंखें नहीं उठायीं तो इस अग्नि कुण्डसे पतिकी रक्षा अवश्य कर सकूं अन्यथा इसी अग्निमें जलकर अपने पापका प्रायश्चित कर लूं।" वह अग्नि की बाहर दीवारीको तोड़ती हुई उसमें प्रवेश कर गयी। और बड़ी ... हाथ अपने पति और अपनी जेठानीको ले अग्निके घेरेसे

पतिव्रता अरुन्धती ।

...निकल आयी। ऐसा करनेमें उसको अग्निकी ज्वालासे किसी
। हानि नहीं हुई। आगकी वह लपटें शीतल समीर सी
हुईं, उसके साथ आनेमें मनोरमाको भी किसी प्रकारका
हीं हुआ, वह भी निष्कलंक बच गयी। मानभंजन भी बेदाग
ल आये, किसी प्रकारकी आंच नहीं आयी। यह देख
मनोरमाको बड़ा आश्चर्य हुआ, वह वेदवतीको देख बोल
ी—"बहिन! इस विपत्तीसे तूने मेरी रक्षा की, मैं तेरे इस उप-
ारको कभी नहीं भूलूंगी। जीवन भर इस ऋण-बोझसे लदी
हूंगी।" मनोरमाको आगे देख गीता उसके गले लिपटकर बोली
—"बहिन, पातिव्रत्यके प्रभावसे वेदवतीने इस भीषण अग्नि कुण्डसे
तुम दोनोंकी रक्षा की। इससे तुम्हें शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।
अपनी ऐसी बहिनको कष्ट पहुंचानेवालोंको कभी सुख नहीं हो
सकता। अब अपने कियेपर पश्चाताप करो और वेदवतीको
गले लगाओ। आशा है फिर कभी सतीका अनादर नहीं करोगी।"
मनोरमाने गीताके मुखसे इतनी बातें सुननेके साथही पुनः वेदवती
को गले लगाकर कहा—"बहिन यथार्थमें मैंने तुम्हें कष्ट पहुंचाया
है। इसलिये तेरे आगे क्षमा प्रार्थी हूं। आशा है तू अपने हृदय
हृदयसे मेरे अपराधको क्षमा करोगी।" मनोरमाके मुखसे इतनी
बातें निकलतेही वेदवती उसका चरण पकड़कर बोली—"जी जी!
मेरे हृदयमें तुम्हारे प्रति वही श्रद्धा भक्ति है जो सम्मानको माताके
प्रति हुआ करती है। मेरी भूलोंपर दृष्टि न कर दया करना। हो
सकता है मुझसे अज्ञान अवस्थामें कुछ भूलें हुई हों।"

मनोरमा—बहिन, तू साक्षात् देवी है, मुझसे बड़ी बड़ी भूल हुई होगी। हा ! मैं अकारण तुम्हें कष्ट दिया करती थी, आशा है तू क्षमा करेगी।

गोमाने उसी समय मनोरमाको वेदवतीकी अलौकिक प्रभु-भक्तिका परिचय कराया। अरुन्धतीके विमल उपदेशसे मनोरमाका मन मानस पवित्र और निर्मल हुआ, ज्ञाननेत्र खुले। माया और मोहका पर्दा उठा, स्वार्थका नशा दूर हुआ। जिस वेदवतीको आंखों का कांटा समझती थी अब वह उसे अपनी आंखोंकी पुतली समझने लगी। अपने किये हुये पर पश्चाताप करती हुई उनसे भी क्षमा याचना करने लगी। तदन्तर उन सबोंसे विदा मांग मानभंजन और वेदवतीको साथ लिये अपने आश्रमको वापस आयी। उसीदिनसे उसमें पवित्र परिवर्तन हो गया। सासससुरकी सेवा सच्चे हृदयसे आदरके साथ करने लगी। पतिके साथ उसका ऐसा ही व्यवहार होने लगा जैसा सच्ची पतिव्रताका हुआ करता है। मनोरमामें यह विचित्र परिवर्तन देख औरोंको आश्चर्य होने लगा। किन्तु आश्चर्य करनेकी आवश्यकता नहीं। इस परिवर्तनशील संसारमें बिगड़ते और सुधरते देर नहीं लगती। संगतिही एक ऐसी चीज है जो भलेको बुरा और बुरेको भला बनाती है।

पाठकोंके आगे प्रमाण प्रत्यक्षही है कि सती श्रेष्ठा पतिव्रताकी संगतिसे बिगड़ती हुई मनोरमा सुधर गयी। उसको डूबती हुई

नतिके गर्त में गिरता जा रहा है और जबतक अपनी इस त्रुटिकी ओर ध्यान नहीं देगा तबतक इसके सुधरनेकी भी कोई आशा नहीं है। जिस पवित्र भारतकी वन्दनीय गोदमें सीता, सावित्री, अनुसूया, बेहुला, दमयन्ती, अरुन्धती, चिन्ता प्रभृति एकसे एक

अरुन्धतीका विवाह।
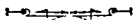
मैं अपने कथानकको छोड़ किसी दूसरी ओर बहक आया। पाठक पाठिकाओं! घबड़ाओ नहीं अब पुनः आपका ध्यान पतिव्रता अरुन्धतीके कथानककी ओर आकर्षित करता हूँ। मनोरमा देववतीके साथ उन सबोंसे विदा हो अपने आश्रम को गयी, उसके जानेके बादही गीता भी अरुन्धती से घर चलनेके लिये आग्रह करने लगी। अरुन्धती अपनी सखी गीताके आग्रहको स्वीकार कर मानस पर्वतसे चलनेका विचार करने लगी। उस स्थानसे आगे बढ़ पर्वतपर लहलही लता कुंजोंमें होती पुष्प पादपोंको देखती आगे बढ़ रही थी कि सहसा उसकी दृष्टि सघन छाया वाले वृक्षके नीचे बैठे हुए अद्वितीय रूपवान युवकपर पड़ी। युवकका गठीला शरीर, लम्बी लंबी भुजा, उन्नत वक्षस्थल, चौड़ी ललाट, उत्फुल्ल कमल जैसा मुख-मण्डल, नवीन चन्द्र सदो

को देख युवक भी उस पर मोहित हो गया। आंखें चार होतेही वे एक दूसरे पर बिक गये। मनमथने दोनोंके मनको मथना आरम्भ किया। अरुन्धती अपनी सखी गीताकी आंखें बचा बहुत समय तक युवककी ओर सतृष्ण दृष्टिसे देखती रही युवक भी एकाग्र नेत्रोंसे युवतीकी ओर देखता रहा। किन्तु एक दूसरेसे दूरही रह कर आंखें बचा देखते रहे। दोनोंमें किसी प्रकारकी बातें नहीं हुई। गीताकी दृष्टि उस ओर गयी भी नहीं, उसने युवक को देख भी न पाया। अरुन्धती प्रेमके माया-जालमें ऐसी उलझी कि वहांसे निकलना भी कठिन हो गया। वनस्थलीको शोभा देखनेके बहाने गीताको उसने वहां बहुत देर तक ठहराया। उस-की चलनेकी इच्छा न थी, किन्तु गीतासे इस विषयमें कुछ कहना भी अनुचित समझती थी। अन्तमें पश्चाताप करती हुई मन-ही-मन युवकके ऊपर बिककर, गीताके साथ आगे बढ़ी।

घर पहुंचने पर भी उसकी चित्त वृत्ति ठीक नहीं हुई। प्रेम की लगन ऐसी लगी कि भोजन और नींद भी भूल गयी। रातों दिन युवककी प्राप्तीकोही चिन्ता कर, समय व्यतीत करने लगी। ऐसा करनेसे उसका शरीर पीला और दुबला हो गया। उसकी

इस विषय पर विचार करनेसे आँखें खुलीं। उसके मनमें ऐसी कुवासनायें क्यों उठीं? सती पतिव्रताके लिये इससे बढ़कर चिन्ताकी बातें हो ही क्या सकती हैं? किसी अपरिचित युवकके रूप पर मोहित हो जाने वाले अपने उस स्वभावसे उसे घृणा हुई। लज्जासे उसका मुख विवर्ण हो गया। आपही अपनेको धिक्कारती हुई आत्म-हत्याको तैयार हुई। मन ही मन कहने लगी, पिताने मुझको पातिव्रत्यकी पुनीत शिक्षा ग्रहण करनेको भेजा है और मैं ऐसी पापीयसी कुलकलङ्किनी निकली कि राह चलते युवकके रूप पर मोहित हो सतीके पवित्र यशको कलंकित करनेको तुली। इस तुच्छ जीवनसे क्या लाभ? जिससे संसारकी भलाई किसी अंशमें न हो सके, जो स्त्री इस प्रकार अपना पातिव्रत्य त्यागनेको तैयार है उसका जीवन ही व्यर्थ है। उसके मनमें उस युवकके रूपसे काम वासना क्यों उत्पन्न हुई? इसीकी चिन्तासे अरुन्धतीका शरीर गलने लगा। जिसने कुछ दिन पहले उसके मुख पर ब्रह्मचर्यके साथ पातिव्रत्यकी प्रभा प्रकाशित देखी थी उसके हास्य वदन मण्डलको लज्जा और चिन्ताकी प्रभासे आच्छादित देख उसे विस्मय क्यों नहीं होता? शोक और चिन्तासे वह आधी होगयी। इस अवस्थामें अधिक दिन व्यतीत नहीं हुए थे कि उसकी शुभ चिन्ता करने वाली [illegible] सखियों और देवियोंकी दृष्टि इस मुरझाये हुए वदन पर पड़ी। उन्होंने अरुन्धतीसे उसके दुःखका कारण पूछा। किन्तु पूछनेपर भी अरुन्धती अपनी मनोविकारोंकी बातें किसी दूसरीसे प्रकट नहीं कर सकी।

लज्जासे मस्तक झुकाये खड़ी रही। सावित्री और बेहुला उसकी खिली हुई रूपकलीको असमय मुर्झायी देख बहुत दुखी हुईं। बार बार अरुन्धतीसे पूछने पर जब कुछ उत्तर नहीं मिला तब ध्यान कर देखने लगीं। ध्यान करनेसे उनको सब बातें मालूम हो गयीं। सारी बातें ज्ञात होनेपर उन्होंने अरुन्धतीको सांत्वना देते हुए कहा—"बेटी! तुम इसके लिये किसी प्रकारकी चिन्ता न करो। लज्जा संकोचकी भी कुछ आवश्यकता नहीं। हमें तुम्हारी सब बातें ज्ञात हो गयीं। तुम्हारे पुनीत पातिव्रत्यमें किसी प्रकारका कलङ्क नहीं लगने पाया है। तुमसे ऐसा बुरा कार्य नहीं हुआ है जिसके लिये तुम इस प्रकारसे दुःख और चिन्ता किया करो। तुम उस दिन मानस पर्वतपर जिस पुरुष पुङ्गवको देखकर मोहित हुई थी वह तुम्हारे पूज्य पति थे, कोई दूसरे नहीं। पतिके रूपपर मोहित होनेवाली स्त्री कुलटा नहीं कही जा सकती है। तुम विचारती होगी कि अभी तक मेरा विवाह तो हुआ ही नहीं फिर वे मेरे पूज्य पति कैसे हुए? हम अभी तुम्हारे इस भ्रमको भी दूर किये देती हैं, सुनो! तुम उस जन्ममें सन्ध्याके नामसे प्रसिद्ध थी। महर्षि वशिष्ठजीके बताये हुये विष्णु मन्त्रके सहारे चन्द्रभागा नदीके किनारे चारों युगोंतक घोर तपस्या कर विष्णुको सन्तुष्ट कर तुमने वर पाया कि संसारमें सबसे श्रेष्ठ पतिव्रता हो, उसी समय विष्णुके आदेशानुसार महर्षि मेधातिथिके यज्ञमें अपना प्राण त्यागते समय महर्षि वशिष्ठको पति पानेकी कामना की थी। यज्ञ कुण्डमें शरीर त्यागने बाद तुम अरुन्धती

के रूपमें अवतरित हुई और महर्षि मेधातिथीसे पाली जाकर पिताकी आज्ञासे यहां पातिव्रत्यकी शिक्षा प्राप्त करने आयी। मानस पर्वतपर वृक्षके नीचे समाधिस्थित युवक महर्षि वशिष्ट थे। आशा है अब तुम अपनी चिन्ताको भूल जाओगी। तुम्हारा दुःख सुखमें परिणत हो जायेगा।"

सावित्रीके मुखसे इतनी बातें सुनतेही अरुन्धतीका हृदय हर्षसे नाच उठा, हृदयमें आनन्दकी लहरें उठने लगीं। उसे अपनी बातें स्मरण हो आयीं। खोई हुई निधिके मिल जानेसे अपार खुशी हुई।

सती पूज्य जननी सावित्रीको अरुन्धतीका विवाहका समय निकट आया प्रतीत हुआ उसी समय उन्होंने जगत पिता ब्रह्माके पास अरुन्धतीको लेजाकर सब बात उनसे कह सुनायी।

ब्रह्माजीने उसी समय मेधातिथीको स्मरण किया। स्मरण करनेके साथही वे वहां उपस्थित हो बोले, "पिता! क्या आज्ञा होती है?"

ब्रह्मा—महर्षि! अब आपकी पुत्री अरुन्धती विवाहके योग्य हुई। पवित्र पातिव्रत्यकी शिक्षासे पूर्ण दक्षा हुई। आप विश्वास रखें संसारको पतिव्रताओंमें अरुन्धति ही सर्व प्रथम समझी जायगी। इसने अपने योग्य पति भी चुन रखा है। अतएव अब वेद विधिके अनुसार इसका विवाह-कार्य सम्पादन करना ही उचित है। इसी उद्देश्यसे आपका स्मरण किया है। अधिक विलम्ब करनेकी आवश्यकता नहीं।

मेधातिथि—अरुन्धतीने किसको अपना पति चुना?

ब्रह्मा—इसने ब्रह्मर्षि वशिष्ठको पति रूपमें वरण किया। महर्षि वशिष्ठ जैसे ज्ञानी और दूरदर्शी ऋषि बहुत कम हैं। वे सब प्रकारसे अरुन्धतीके योग्य हैं। युगल जोड़ी सब प्रकार एक दूसरेके अनुकूल है।

मेधातिथि अपनी प्रति-पालित पुत्रीकी प्रशंसापर अत्यन्त प्रसन्न हो सावित्री और बेहुलाके आगे हाथ जोड़ सिर नवाकर बोले—"माताओं! तुम्हारी शिक्षाके प्रभावसे ही आज अरुन्धतीकी प्रशंसा सुननेमें आती है। तुम्हारीही कृपासे यह पातिव्रत्य जैसे गहन मार्गपर चलनेके योग्य समझी जाने लगी। सेवक इस ऋणसे जीवन भर उऋण नहीं हो सकेगा।"

सावित्री—मुने! आपकी कन्या असाधारण बुद्धिमती है, उसने हमारी शिक्षासे ऐसा चमत्कार नहीं पाया है। यह उसके पूर्व संचित संस्कार हैं। विश्वास रखें पूर्व जन्मका संस्कार ही इस जन्ममें भी कार्यकर दिखाता है। हमारी शिक्षा केवल जगौनी मात्र था।

मेधातिथिने उन्हें प्रणाम कर जगत पिता ब्रह्मासे अरुन्धतीके विवाहके विषयमें पूछ ताछ की। ब्रह्मा अरुन्धती, सावित्री और मेधातिथिको लिये मानस पर्वतपर पहुंचे। वहाँ पहुंचकर उन्होंने त्रिलोकी नाथ शंकरका स्मरण किया।

स्मरण करतेही योगीश्वर अपने गणोंके साथ उनके आगे उपस्थित हुये। ब्रह्माजीने बड़ी श्रद्धा-स्नेहसे उनका स्वागत

किया। भूतनाथने उनसे सप्रेम निवेदन किया—"कमलासन! किस लिये मेरा स्मरण करनेका कष्ट उठाया है? मेरे योग्य सेवाके लिये सहर्ष आज्ञा कीजाय, मैं अभी पूर्ण कर दूं।" ब्रह्माजीने बड़े विनीत वचनोंमें अरुन्धतीका पूरा कथानक सुनाकर उसके विवाहके विषयमें निवेदन किया। ब्रह्माके मुखसे उसका कथानक सुन कर शिवजीने प्रसन्नता पूर्वक विष्णुका ध्यान किया। भक्तवत्सल भगवान शीघ्रताके साथ उनके आगे उपस्थित हो, आदर पूर्वक उनसे मिलकर बोले—"क्या आज्ञा होती है?" शिवजीने उनके आगे ब्रह्माजीके प्रस्तावको पुनः दुहराकर उसका समर्थन और अनुमोदन किया। भगवानने उसी समय प्रस्ताव पास कर उसे कार्य रूपमें परिणत करनेका विचार किया। उसी मानस-पर्वतपर वशिष्ठके साथ अरुन्धतीके विवाहकी तैयारी होने लगी। उसी समय ऋषि महर्षियों और देवी देवताओंको निमन्त्रण-पत्र शीघ्र शुभ कार्यमें सम्मिलित होनेके लिये भेजे गये। समाचार पाते ही देवी देवता, यक्ष, गन्धर्व और देव दूतोंसे पर्वत भर गया। विवाह मण्डप बनाया गया, बड़ी विलक्षणताके साथ मण्डपादि सजाया गया। यथा समय कुमारी अरुन्धती और महर्षि वशिष्ठ मण्डपमें लाये गये। वेद विधिके साथ हवनादि कार्य सम्पन्न कर अरुन्धतीका दान महर्षि वशिष्ठजीके हाथ ब्रह्माजीने दिये, भगवान विष्णुने बड़ी प्रसन्नताके साथ अरुन्धतीको आशीर्वाद सुनाया—"पुत्री! तुमने अपने दाम्पत्यके प्रभावसे देवोंको प्रसन्न किया है। इसी

पतिव्रता अरुन्धती।

पवित्र कार्यसे यल ब्रह्मर्षियोंमें श्रेष्ठ महर्षि वशिष्ठजीको अ
पति बनाया। मैं तुम्हारे इस कार्यसे तुमपर बहुत प्रसन्न
इस प्रसन्नताके प्रमाण स्वरूप तुमको स्वर्ग द्वारपर अचल स्था
प्रदान करता हूं। तुम अपने पूज्य पतिके साथ स्वर्ग द्वारपर अप
स्थान अचल कर अपनी निर्मल कीर्तिसे संसारको वशि
करती रहोगी। पतिव्रता स्त्रियां तुमको अपनी पथप्रदर्शिका
समझा करेंगी।"

विष्णु भगवानसे इस प्रकार आशीष पाकर अरुन्धती विशेष
हर्षित हुई।

ब्रह्माजीने तपोनिष्ट वशिष्ठके हाथ अरुन्धतीके सौंपी जाने
पर कहा "पुत्र तुम्हारा विवाह पतिव्रता अरुन्धतीके साथ हो गया।
आशा है अरुन्धतीको पाकर विशेष प्रसन्न होओगे, क्योंकि सौभा-
ग्यवती सुशीला सर्व गुण सम्पन्न स्त्री भाग्योदय होनेसेही मिला
करती है। अरुन्धती जैसी पवित्र चरित्रवाली स्त्रियां संसार भर
में नहीं सुनी जातीं।"

वशिष्ठ—पिताजी। यद्यपि मैं विवाह बंधनमें बंधना नहीं
चाहता था, तथापि आप लोगोंकी आज्ञा पालन करनेके निमित्त
मुझे ऐसा करना पड़ा। इस कार्यसे मुझे विशेष
प्रसन्नता है।

अरुन्धतीकी सखियां तथा सावित्री प्रभृतिने अरुन्धतीके अहि-
वात अचल रहनेका आशिर्वाद दिया। स्वयं सुरेश, चन्द्र, वरुण,
कुबेर, अग्नि, धर्म प्रभृति सब देवतागण उस विवाहके अवसर

उपस्थित हुये। आते कैसे नहीं जब स्वयं शूलपाणिशंकर, चक्रधर विष्णु और कमला प्रजापतिही विवाह कार्य कराने बैठे थे? मानस पर्वत देवताओंके समागमसे विलक्षण दृश्य धारण किये स्वर्गको भी नीचा दिखा रहा था। विवाहके समय वर कन्याके वल्कल वस्त्र दूरकर बहुमूल्य रेशमी वस्त्र दिये गये, बड़े २ राजा महाराजाओंको जो मणि मुक्ता अलभ्य थे ऐसे अगणित मणि मुक्ताओंसे वर कन्या सुशोभित किये गये। वर कन्याकी युगल जोड़ी हर-पार्वती या विष्णु-लक्ष्मीकी अनुपम जोड़ी जैसी सुशोभित हो रही थी। अहा! कैसी अनोखी झांकी है, कैसी शोभी छटा है, कैसा अपूर्व दृश्य है। उस स्वर्गीय सौंदर्यके वर्णन करने की शक्ति लेखकको इस लेखनीमें नहीं है।

विवाहके समय संसारके सब तीर्थोंका जल आवाहन करके ब्रह्माजीने मानस पर्वतपर ला रखा था। विवाह कार्य आरम्भ होनेके पहलेही वेद मंत्रों द्वारा वर कन्याको मान्दाकिनीके पवित्र जलसे स्नान करा मण्डपमें बिठाया गया। देव गुरु बृहस्पतीजीने मंत्रो च्चारण पूर्वक विवाहकी विधि आरम्भ की। मेधातिथि कन्यादान करनेके लिये आचार्य आसन पर बैठे। अग्निको साक्षी रख वेद मन्त्रके अनुसार कन्याका पाणिग्रहण वरके हाथ पर रखा गया। उस समयका दृश्य बड़ा अपूर्व मालूम होता था। वेद मन्त्रके द्वारा उस विलक्षण प्रेम बन्धनमें अजीब चमत्कार था। दो प्राण एक हो रहे थे दो शरीरका भार एकपर सौंपा जा रहा था। यथार्थ में बड़े उत्तर दायित्वका भार वरके हाथ सौंपा जारहा था।

"स्वस्ति, उच्चारणके साथ वशिष्ठजीने मेधातिथिसे कन्यादान लिया और उनकी कन्याका भार अपने ऊपर उठाया।

यों तो आजकलके अनेक नवशिक्षित विवाह बन्धनको बन्धन नहीं समझते। उनकी धारणा है कि यह विलासकी सामग्री ग्रहण की जाती है, पर विचार कर देखनेसे प्रतीत होगा कि यह कितने उत्तर दायित्वका कार्य है। वे जितनाही सहल समझते हैं वह उतनाही कठिन है।

अरुन्धतीको वशिष्ठके हाथ सौंप आशीर्वाद देकर त्रिदेव अपने अपने स्थानको गये। देवतागण भी आशीर्वचनके बाद अपने स्थानके लिये विदा हुये। मेधातिथिजीने सबको बड़े सत्कारके साथ विदा किया।

सती सावित्री और बेहुलाने अरुन्धतीको पातिव्रत्यके पवित्र मार्गमें पैर बढ़ानेका शुभ वचन सुना, अपने मन्दिरकी ओर प्रस्थान किया।

महर्षि वशिष्ठ विष्णुके प्रदान किये हुये अपने नवीन स्थान पर जा विराजे। पतिव्रता अरुन्धती स्वामीकी अनुगामिनी हुई। महर्षि मेधातिथि कन्याको जामाताके हाथ सौंप अपनी कुटीको लौट गये। उस दिनसे उनके शरीरमें कुछ अधिक स्फूर्त्ति सी प्रतीत होने लगी, सिरका बोझ हलका सा ज्ञात हुआ। संसारमें कुमारी कन्या जब तक योग्य पात्रके हाथ अर्पित नहीं की जाती है तबतक गृहस्थोंके सिरका बोझ हलका होताही नहीं। मेधातिथि अरुन्धतीको योग्य पात्रके हाथ सौंप बहुत प्रसन्न हुए।

उसी समयसे मानस पर्वतकी महत्ता बहुत बढ़ गई, पतिव्रताके प्रभावसे संसारके सब पुण्य तीर्थोंके जलसे सिक्त होने पर वह विशेष पवित्र हो गया। देवताओंकी दृष्टिमें वह संसारके सब पुण्य स्थानोंसे अधिक पवित्र समझा जाने लगा।

अरुन्धतीकी पति सेवा।
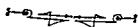
सती अरुन्धती अपने पूज्य पति देवके साथ विशु प्रस्थ आश्रममें जाकर पति सेवामें लीन रहने लगी। महर्षि वशिष्ठ अरुन्धतीको स्त्री रूपमें पाकर विशेष प्रसन्न रहने लगे। पूज्य पति की सेवा अतिथिका आदर, आश्रमके कार्य प्रभृतिको वह ऐसी उत्तमतासे संभाल लिया करती थीं कि ऋषिवरको कभी किसी कार्यके लिये प्रयास भी नहीं करना पड़ता था।

नित्य ऊषा उदयसे प्रथम ही अरुन्धतीकी नींद खुलती, ऋषि की आंख खुलनेके पहलेही वह आश्रमको साफ कर लेती। पति देवके लिये जल पात्र साफ कर जल रख दिया करती, मुनी पुङ्गव वशिष्ठ ज्योंही उठते त्योंही उनके आगे मुंह धोनेके लिये जल लिये खड़ी रहती। महर्षि शौच कार्यासे निवृत होने याद जलाशय की ओर जाते इधर वह उनके पूजा पात्रको मांज मूंजकर साफ करती। पुष्प संग्रह करती, आश्रम लीप पोतकर परिष्कृत करती, हवनके लिये हवन वस्तुओंका आयोजन करती, भोजनके लिये फल मूल तैयार रखती। उधर महर्षि प्रातः कालके नित्य कर्मों से निवृत होकर स्नानादिसे अवकाश पा आश्रममें आ पूजापर बैठते। अरुन्धती पूजा सामग्री उनके आगे रख श्रद्धा पूर्वक पूजन कर्मको ध्यानसे देखती रहती। तत्पश्चात उनके लिये भोजन तैयार कर आदर और प्रेमसे पतिको भोजन करा बाद उच्छिष्ट अर प्रसाद

स्वरूप पा लिया करती। भोजनादिसे निवृत हो पति देवके आगे बैठ नारी धर्मके विषयमें उपदेश सुना करती। यों तो अरुन्धती स्वभावसेही आदर्श सती थी तिसपर भी सावित्री और मेहुला देवीकी शिक्षा और ऋषि श्रेष्ठ वशिष्ठ जैसे पतिके उपदेशसे उसे सोनेमें सुगन्धवाली कहावत चरितार्थ हुई।

अवसर पानेपर अरुन्धती ऋषि महर्षियोंकी बेटी बहुओंको स्त्री धर्मका उपदेश दिया करती थी। युवतियाँ पतिव्रता अरुन्धतीके अमृतमय उपदेशसे अत्यन्त तृप्त रहा करती थीं।

महर्षि वशिष्ठ अपनी धर्मपत्नी अरुन्धतीके साथ कभी-कभी तपोवनमें भी भ्रमण करने जाया करते थे। वनमें भी वह पति देवकी सेवासे कभी पीछे नहीं रहती।

एक समय पतिव्रता अरुन्धती अपने पतिदेवके साथ तपोवनके सेवा कार्यमें लीन थी। संयोगवश उसी मार्गसे महाराज गाधि पुत्र युवराज विश्वामित्रका रथ शिकारकी ओर आगे बढ़ रहा था। युवराज रथसे मुनीके आश्रमकी ओर संकेत कर अपने सारथीसे बोल उठे—"सारथी! यह पवित्र आश्रम किस मुनि श्रेष्ठका है?"

सारथी—महाराज! ऋषि श्रेष्ठ वशिष्ठजीका यह पवित्र आश्रम है।

वशिष्ठजीके प्रति युवराजको पहलेहीसे श्रद्धा थी, नाम सुनते ही वे रथसे उतर आश्रमकी ओर चले। युवराजको आश्रमकी ओर आते देख वशिष्ठजी पहलेसेही स्वागतके लिये तैयार हुए।

भरुन्धती अतिथि सत्कारके लिये उपयुक्त वस्तुओंके संग्रहमें लगी।

आश्रममें पहुंच कर युवराजने आदरके साथ दम्पतिको प्रणाम किया। बड़े सत्कार से महर्षिने युवराजको अपने आगे आसनपर बिठा कर, कुशल प्रश्न पूछने बाद, उस रात आश्रममें रहनेके लिये इस प्रकार निवेदन किया—"युवराज! यदि आप आज रात भर इस पर्ण कुटीरमें विश्राम करें, तो मुझ दरिद्रको अतिथि सेवाका अच्छा अवसर मिले। मेरी धर्म पत्नीका यही अनुरोध है। आशा है आप इसे स्वीकार करनेमें किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं करेंगे।"

विश्वामित्र—ऋषिराज। मैं आपके दर्शनसे कृतार्थ हो गया, अब अधिक कष्ट उठानेकी आवश्यकता नहीं। ऐसा होनेसे आपके भगवत् भजनमें बाधा पहुंचेगी, आप महात्माओंका चरण रजपाकरही हमारे जैसे सांसारी मनुष्योंको कृतार्थ होना चाहिये।

वशिष्ठ—युवराज! ऐसा होही नहीं सकता, मेरी धर्मपत्नीका नियम भंग न किजिये, संध्या समय आये अतिथिको वह जाने नहीं देती। आज आपको यहां ठहरना होगा, आप कष्टके लिये चिन्ता न करें। मेरी ओर देख फल मूलके भोजनसे सन्तुष्ट रह आश्रमका धर्म निबाहें।

अतिथि सत्कारसे बढ़कर संसारमें कोई दूसरा धर्म ही नहीं है। इससे मेरे धर्म कर्ममें बाधा नहीं पहुंच सकती। अतिथिका आसन भगवानकेही समान है। अतिथि चाहे किसी कुलका क्यों न हो देवताके समान पूज्य है।

विश्वामित्र—मैं युवराज हूं, मेरा धर्म है कि तपोवनमें घूम-घूमकर तपस्वियोंकी रक्षा करूं। यज्ञ तप आदिमें उन्हें किसी प्रकारकी बाधा नहीं पहुंचे इसी उद्देश्यसे पिताजीकी आज्ञा पालन करनेके लिये वनमें भ्रमण कर रहा हूं। मैं किसीका अतिथि नहीं हूं।

वशिष्ठ—राजकुमार! जो किसीके आश्रममें उपस्थित हो चाहे वह दरिद्र हो अथवा महाराज, पर उस समय उसका अतिथि है। अतिथि सत्कारका फल बड़ा ही उत्तम है। आपको स्मरण होगा कि भगवानने क्षीर समुद्रमें भृगुजीका पाद प्रहार क्यों सह लिया था? महाराज अम्बरीषने महर्षि दुर्वासाके लिये एक वर्ष का उपवास क्यों किया था? महाराज मोरध्वजने पुत्रके मस्तक पर अपने हाथसे आरा क्यों चलाया था? अतिथि सेवाको सब धर्मोंसे श्रेष्ठ समझ ऐसा किया था। अतएव आप मुझे इस धर्म फलसे क्यों वंचित करना चाहते हैं?

विश्वामित्र—आपका कहना यथार्थ है। किन्तु·········

वशिष्ठ—फिर किन्तु परन्तु क्या? आपको कष्ट स्वीकार करनाही पड़ेगा।

विश्वामित्र—मैं धर्मकार्यको सदा सेवाके लिये तैयार हूं, किन्तु अभी चलनेकी आज्ञा दीजिये मेरे साथ सेना सम्पन्न बहुत है।

वशिष्ठ—उसके लिये चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं। [illegible]
[illegible] इससे कष्ट है नहीं कि आप

[illegible] ऐसा सुख कहीं नहीं प्राप्त होगा, किन्तु इसके जितने [illegible] ऐसा नहीं स्वीकार [illegible] भी उचित नहीं है। [illegible] कन्द मूलोंके स्वादको देखिये। [illegible] [illegible] और [illegible] कीजिये। [illegible] [illegible] लीजिये।

इस प्रकार महर्षि वशिष्ठके बहुत आग्रह करनेपर युवराज विश्वामित्रने उनके आश्रममें रहना स्वीकार किया। सारथीको रथसे घोड़े खोलनेके लिये आज्ञा दी। सेनापतिको बुलाकर सेनाओंके ठहरानेका आदेश दिया। मैदानमें तम्बू कनात खड़ी की गयी। युवराज विश्वामित्रने सेनापतिको यह भी ताकीद कर दी कि "यह महर्षि वशिष्ठका तपोवन है ऐसा न हो कि कोई किसी प्रकारकी अनाधिकार चेष्टा करे। कोई फल मूलोंको न उठावे आश्रम आश्रित मृगशावकों पर हाथ न उठावे।"

युवराजकी आज्ञानुसारही सेनापतिने सबको सावधान कर दिया।

विश्वामित्र सायंकालीन संध्यासे निवृत होने बाद इसी विचार में लीन थे कि आज यद्यपि थोड़ा वशिष्ठजीने मेरी सारी सेनाओंको ठहरा लिया है, किन्तु इतने मनुष्योंके भोजनादिका प्रबन्ध कैसे करेंगे? छोटी सी गौ लेकर मुनिराज रहते हैं ऐसी अवस्थामें भी आग्रह पूर्वक मेरी सारी सेनाको ठहरा रक्खे हैं।

इधरका तो यह समाचार था और उधर महर्षि वशिष्ठजी

अपनी धर्मपत्नी अरुन्धतीसे उन सबोंके भोजनादिके लिये परामर्श कर रहे थे।

वशिष्ठ—मैंने आग्रह पूर्वक युवराज विश्वामित्रको अपने आश्रममें ठहराया है। अब ऐसी युक्ति होनी चाहिये जिससे उनको किसी प्रकारका कष्ट न हो।

अरुन्धती—आप उसकी चिन्ता न करें। भगवानकी कृपासे राजकुमारको किसी प्रकारका कष्ट नहीं होगा।

वशिष्ठ—स्त्रियाँ पातिव्रत्यके प्रभावसे सब कुछ कर सकती हैं।

अरुन्धती—नाथ! आप मुझे ऐसी बातोंसे लज्जित न कीजिए ईश्वरने कृपाकर आपको कामधेनुकी पुत्री नन्दिनी गौ प्रदान की है, उसीसे सब काम हो जायेंगे।

यथार्थमें ऋषिराजकी नन्दिनी इच्छित फल देनेवाली थी। अरुन्धती उसके आगे उपस्थित हो बोली—"नन्दिनी! तुम्हारे ही बलपर प्राणनाथने युवराजकी असंख्य सेनाओंको अपने आश्रममें ठहराया है। आशा और विश्वास है कि तुमसे उनकी सारी आशायें पूरी होंगी। सैनिकोंको किसी प्रकारका कष्ट नहीं हो, वे इच्छित भोजन और आराम पावें। महाराज कुमारको किसी प्रकारकी असुविधा न हो।"

अरुन्धतीका कहना पूरा हुआ नन्दिनीके अंगसे सैकड़ों स्वर्ण सेवक निकलकर राजकी सेनाओंकी सेवामें लगे। दुधारूने ये छोटे मनुष्य सबके लिये उनकी इच्छाके अनुकूल प्रबन्ध होने देर नहीं लगी। उन महर्षियोंके भोजनादिका प्रबन्ध भी उनकी

इच्छाके अनुसार हुआ। भोजनकी चीजें उनके खीमेंमें पहुंचा दी गयीं। महर्षि वशिष्ठ बड़ी शिष्टताके साथ उन सबोंके निकट आ आकर नम्र और मधुर वचनोंसे भोजनादिके लिये निवेदन करते थे।

महर्षिका आतिथ्य सत्कार और प्रबन्ध व्यवस्था देखकर विश्वामित्रजी तथा उनके वीर सामन्त सब चकित हो रहे थे। इस प्रकारका राजसी प्रबन्ध देखकर विश्वामित्रजीको बड़ा आश्चर्य हो रहा था कि पर्ण कुटीरमें रहनेवाले दरिद्र तपस्विने ऐसा सुप्रबन्ध कैसे किया! बड़े बड़े राजा महाराज ऐसी सुअवस्था नहीं कर सकते हैं, एक दरिद्र तपस्वीके पास इतनी चीजें और सेवक कहांसे आये? अवसर पाकर उन्होंने वशिष्ठजीसे कहा—"महर्षिराज! आपका प्रबन्ध देखकर मैं चकित हो रहा हूं। आज तक राज प्रासादमें मेरी सेनाओंका ऐसा भोजन तथा आराम नहीं मिला था। आपकी पर्ण कुटीरमें उससे कहीं अधिक आराम और सुख मिला, किन्तु क्या आप यह बतानेकी कृपा करेंगे कि ऐसा उत्तम प्रबन्ध आपने कैसे किया? इस जनहीन वनमें आपको इतने सेवक कैसे प्राप्त हुए? भोजनकी ऐसी उत्तम चीजें कहां मिलीं?"

वशिष्ठ—राजन! भाग्यवान पुरुष वृक्षके निचे रहने पर भी वैसाही सुख पाते हैं जैसा उनको राजप्रासादमें मिला करता है। आपको सेवामें जितनी चीजें उपस्थित की गयीं, वे आपके ही भाग्यबलसे यहां प्राप्त होसकीं, इसमें मेरी कुछ विशेषता नहीं है।

विश्वामित्र—ऋषिराज! आपके सत्कार बोझसे मैं दब रहा हूं, आप धन्य हैं। आपकी धर्मपत्नी पतिव्रता अरुन्धती धन्य हैं, जिनकी सहायतासे आप ऐसे ऐसे अवसरमें अपनी अलौकिकताका परिचय दे दिया करते हैं। आपसे एक विशेष प्रार्थना है, आशा है मेरी प्रार्थना स्वीकार करनेकी कृपा होगी।

वशिष्ठ—आप क्या कहना चाहते हैं?

विश्वामित्र—यही जानना चाहता हूं कि इन चीजोंके लिये आपने प्रबन्ध कैसे किया?

आपसे एक प्रार्थना करना चाहता हूं आशा है इसपर विचार कर स्वीकार करनेमें विलम्ब न करेंगे।"

वशिष्ठ—क्या आज्ञा होती है ? मेरे योग्य कार्य होगा तो मैं अवश्य और शीघ्र पालन करूंगा।

विश्वामित्र—आप नन्दिनीको मुझे दे दीजिये, यह आपके योग्य नहीं है। इसकी शोभा राज प्रासादमें ही अधिक होगी और आपको इसकी उतनी आवश्यकता भी नहीं है। यदि इसके बदलेमें आपकी धर्मपत्नीको आवश्यकता हो तो इच्छित धन ले सकती हैं। आपके लिये मैं अपने कोषको खोल दूंगा।

वशिष्ठजी गम्भीरताके साथ बोले—"राजन् ! यह बातें विचार पूर्वक नहीं कही गयी हैं। नन्दिनीके बदले सारे संसारका राज्य भी मिले तो वह त्याज्य है। आप लोभ न करें, लोभ ही हानि और अनर्थोंकी जड़ है, संसारका अनिष्टकार लोभ ही है।"

विश्वामित्र भौंहें तान कर बोल उठे—"आप सोच विचार कर मेरी आज्ञा उलंघन करें, यदि विनतीसे कार्य नहीं चलेगा तो मुझे बलका प्रयोग करना पड़ेगा। आप मेरी प्रजा हैं अतएव आप को इतना अभिमान नहीं करना चाहिये।"

वशिष्ठ—तपस्वी तुम्हारे जैसे राजासे डरनेवाला नहीं है। तुम मुझे बलपूर्वक नन्दिनीको लेनेकी धमकीसे भयभीत करना चाहते हो ? विश्वास रखो, तुम्हारा बल मेरे तपोबलके आगे तुच्छ है।

इतनी बातें सुनतेही विश्वामित्रजीका मुख मण्डल क्रोधसे तमतमा उठा, आंखें लाल और भवें तन गयीं। क्रोधित हो बोले—

पुनः उनके आश्रममें उपस्थित हुये। महर्षि वशिष्ठ उस समय सरिताके पुलिनपर सायंकालीन सन्ध्या कर रहे थे, आश्रममें उनकी धर्मपत्नी अरुन्धती और मुनिकुमार थे। विश्वामित्र आश्रमके द्वार-पर उपस्थित हो जोरसे पुकारने लगे। अतिथी समझ अरुन्धती आगे आ बोली—"आप कृपाकर कुछ समयतक बैठनेका कष्ट स्वीकार करें वे सन्ध्या पूजासे अवकाश पा सेवामें शीघ्र उपस्थित होंगे।"

विश्वामित्र क्रोधसे अग्नि हो रहे थे, उनकी भयङ्कर सूरत देखकर भय भी भय खारहा था। किन्तु पतिव्रताको कुछ भी भय

साथ युद्धके लिये तैयार था। तुमने मुझे अपमानित कर युद्ध को चुनौती दी है। आज अपने उन रक्षकोंको पुकारो वे तुम्हारी रक्षाके लिये आवें।

वशिष्ठ—दीनोंकी रक्षा करने वाले दीनानाथ हैं। तू अस्त्र शस्त्र चलाकर देख ले कि वे रक्षा करने आते हैं या नहीं। तुम्हारे जैसे अत्याचारियोंके अत्याचारसे दीनोंकी रक्षा वे नहीं करते तो सृष्टिका अन्त बहुत पहले हुआ रहता।

वशिष्ठकी बातें सुन विश्वामित्र क्रोधसे कांपते हुए उनपर तीखे बाणोंकी वर्षा करने लगे। महर्षि वशिष्ठजी अपनी रक्षा के लिये भगवानका नाम लेकर अपना ब्रह्म दण्ड आगे बढ़ाकर बोले—"तुम्हारे सभी शस्त्रोंका निवारण इसी दण्डसे होगा।"

विश्वामित्रने जितने बाण चलाये सबके सब उसी दण्डपर गिरकर चूर हो गये। उसने वशिष्ठजीको अपने तीक्ष्ण बाणोंका निशाना बनाना चाहा, किन्तु उनके सारे उद्योग व्यर्थ हुए। कुण्डल की तरह दूरसेही उनके सभी अस्त्रोंको बीच, दण्डने अपनाकर भस्म कर दिया। अपना सारा प्रयास व्यर्थ जाते देख विश्वामित्र लज्जित हो और जंगलमें प्रवेश कर गये। वन-ही-वन वर्षोंमें तपस्याकी प्रतीक्षा कर, इसीकी प्राप्तिके लिये घोर तपस्या की. तपस्या पूर्ण होनेपर भी विश्वामित्रजीके हृदयसे यह वैर-भाव नहीं गया। इन्होंने वशिष्ठजीको खूब तंग किए, इनके पुत्रोंको भी क्रोधमें आकर मार डाला, तो भी इनके हृदयको शान्ति नहीं मिली। अपनकी अरुन्धती पुत्र-शोकमें बहुत रोती कलपतीं

पुनः उनके आश्रममें उपस्थित हुये। महर्षि वशिष्ठ उस समय सरिताके पुलिनपर सायंकालीन सन्ध्या कर रहे थे,आश्रममें उनकी धर्मपत्नी अरुन्धती और मुनिकुमार थे। विश्वामित्र आश्रमके द्वार-पर उपस्थित हो जोरसे पुकारने लगे। अतिथी समझ अरुन्धती आगे आ बोली—"आप कृपाकर कुछ समयतक बैठनेका कष्ट स्वीकार करें वे सन्ध्या पूजासे अवकाश पा सेवामें शीघ्र उपस्थित होंगे।"

विश्वामित्र क्रोधसे अग्नि हो रहे थे, उनकी भयङ्कर सूरत देखकर भय भी भय खारहा था। किन्तु पतिव्रताको कुछ भी भय नहीं हुआ। वह सिर नीचा किये अपने वचनके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रही थी। उसी समय मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठ आश्रमकी ओर आ रहे थे, मुनिवेशमें विश्वामित्रको देखकर बोले—"आश्रममें चल कर आतिथ्य स्वीकार करें बाहर क्यों खड़े हैं?"

विश्वामित्र—अपना पुराना बदला चुकानेके लिये उपस्थित हुआ हूं। इन अमोघ अस्त्रोंसे तुम्हारा प्राणान्त करूंगा, देखूं पतिव्रता पत्निके धर्मबलपर कबतक ठहरते हो, आज नन्दिनी भी लेली जायगी, सावधान होकर युद्धके लिये आगे बढ़ो।

वशिष्ठजी गम्भीर स्वरसे बोले—"राजन्! आप अकारणही क्रोधकर रहे हैं मैंने आपका कुछ नुकसान नहीं किया फिर मुझसे छेड़ छाड़ करनेकी आवश्यकता न रहनेपर भी इस प्रकार युद्धके लिये अड़ते हो? मैं तपस्वी हूं, मुझको युद्धकी क्या आवश्यकता है?"

विश्वामित्र—युद्ध करनाही पड़ेगा। इसी दिनसे मैं तुम्हारे

साथ युद्धके लिये तैयार था। तुमने मुझे अपमानित कर युद्ध को चुनौती दी है। आज अपने उन रक्षकोंको पुकारो वे तुम्हारी रक्षाके लिये आवें।

वशिष्ठ—दीनोंकी रक्षा करने वाले दीनानाथ हैं। तू अस्त्र शस्त्र चलाकर देख ले कि वे रक्षा करने आते हैं या नहीं। तुम्हारे जैसे अत्याचारियोंके अत्याचारसे दीनोंकी रक्षा वे नहीं करते तो सृष्टिका अन्त बहुत पहले हुआ रहता।

वशिष्ठकी बातें सुन विश्वामित्र क्रोधसे कांपते हुए उनपर तीखे बाणोंकी वर्षा करने लगे। महर्षि वशिष्ठजी अपनी रक्षा के लिये भगवानका नाम लेकर अपना ब्रह्म दण्ड आगे बढ़ाकर बोले—"तुम्हारे सभी शस्त्रोंका निवारण इसी दण्डसे होगा।"

विश्वामित्रने जितने बाण चलाये सबके सब उसी दण्डपर गिरकर चूर हो गये। उसने वशिष्ठजीको अपने तीक्ष्ण बाणोंका निशाना बनाना चाहा, किन्तु उनके सारे उद्योग व्यर्थ हुए। सूर्यकी तरह दूरसेही उनके सभी अस्त्रोंको खींच, दण्डने उनपर भस्म कर दिया। अपना सारा प्रयास व्यर्थ जाते देख विश्वा-मित्रजी लज्जित हो घोर कामनाने प्रवेश कर गये। मन-ही-मन उन्होंने तपबलकी प्रशंसा कर, ब्रह्मर्षि बननेके लिये घोर तपस्या की, तपस्या पूर्ण होनेपर भी विश्वामित्रजीके हृदयसे द्वेष-भाव नहीं गया। इन्होंने वशिष्ठजीको बहुत तंग किया, उनके पुत्रोंको भी राक्षसोंके द्वारा मरवा डाला, तो भी उनके हृदयको शान्ति नहीं मिली। अपनी अरुन्धती पुत्र-शोकसे बहुत दुःखी रहती

पुनः उनके आश्रममें उपस्थित हुये। महर्षि वशिष्ट उस समय सरिताके पुलिनपर सायंकालीन सन्ध्या कर रहे थे, आश्रममें उनकी धर्मपत्नी अरुन्धती और मुनिकुमार थे। विश्वामित्र आश्रमके द्वार-पर उपस्थित हो जोरसे पुकारने लगे। अतिथी समझ अरुन्धती आगे आ बोली—"आप कृपाकर कुछ समयतक बैठनेका कष्ट स्वीकार करें वे सन्ध्या पूजासे अवकाश पा सेवामें शीघ्र उपस्थित होंगे।"

विश्वामित्र क्रोधसे अग्नि हो रहे थे, उनकी भयङ्कर सूरत देखकर भय भी भय खारहा था। किन्तु पतिव्रताको कुछ भी भय नहीं हुआ। वह सिर नीचा किये अपने वचनके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रही थी। उसी समय मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठ आश्रमकी ओर आ रहे थे, मुनिवेशमें विश्वामित्रको देखकर बोले—"आश्रममें चल कर आतिथ्य स्वीकार करें बाहर क्यों खड़े हैं?"

विश्वामित्र—अपना पुराना बदला चुकानेके लिये उपस्थित हुआ हूं। इन अमोघ अस्त्रोंसे तुम्हारा प्राणान्त करूंगा, देखूं पतिव्रता पत्निके धर्मबलपर कबतक ठहरते हो, आज नन्दिनी भी ठेली जायगी, सावधान होकर युद्धके लिये आगे बढ़ो।

वशिष्ठजी गम्भीर स्वरसे बोले—"राजन्! आप अकारणही क्रोधकर रहे हैं मैंने आपका कुछ नुकसान नहीं किया फिर मुझसे छेड़ छाड़ करनेकी आवश्यकता न रहनेपर भी इस प्रकार युद्धके लिये भड़ते हो? मैं तपस्वी हूं. मुझको युद्धकी क्या आवश्यकता है?"

विश्वामित्र—युद्ध करनाही पड़ेगा। इसी दिनके मैं तुम्हारे

साथ युद्धके लिये तैयार था। तुमने मुझे अपमानित कर युद्ध की चुनौती दी है। आज अपने उन रक्षकोंको पुकारो जो तुम्हारी रक्षाके लिये आवें।

वशिष्ठ—दीनोंकी रक्षा करने वाले दीनानाथ हैं। तू अस्त्र शस्त्र चलाकर देख ले कि वे रक्षा करने आते हैं या नहीं। तुम्हारे जैसे अत्याचारियोंके अत्याचारसे दीनोंकी रक्षा वे नहीं करते तो सृष्टिका अन्त बहुत पहले हुआ रहता।

वशिष्ठकी बातें सुन विश्वामित्र क्रोधसे कांपते हुए उनपर विषैले बाणोंकी वर्षा करने लगे। महर्षि वशिष्ठजी अपनी रक्षा के लिये भगवानका नाम लेकर अपना ब्रह्म दण्ड आगे बढ़ाकर बोले—"तुम्हारे सभी शस्त्रोंका निवारण इसी दण्डसे होगा।"

विश्वामित्रने जितने बाण चलाये सबके सब उसी दण्डपर गिरकर चूर हो गये। उसने वशिष्ठजीको अपने तीक्ष्ण बाणोंका निशाना बनाना चाहा, किन्तु उनके सारे उद्योग व्यर्थ हुए। चुम्बक की तरह दण्डने उनके सीधे अस्त्रोंको खींच, दण्डने उन्हें भस्म कर दिया। अपना सारा प्रयास व्यर्थ जाते देख विश्वामित्रजी लज्जित हो घोर वनमें प्रवेश कर गये। मन-ही-मन उन्होंने तपस्याकी प्रशंसा कर, उसीको प्राप्त करनेके लिये घोर तपस्या की, तपस्या पूर्ण होनेपर भी विश्वामित्रजीके हृदयसे द्वेष-भाव नहीं गया। इन्होंने वशिष्ठजीको बहुत तंग किया, उनके पुत्रोंको भी क्रोधमें आकर मार डाला, तौ भी इनके हृदयको शान्ति नहीं मिली। तपस्वी वशिष्ठजी पुत्र-शोकसे बहुत ही व्याकुल

रहीं, किन्तु तो भी विश्वामित्रको शाप नहीं दिया। धन्य! क्षमा-शील सती! तुम्हारीही इस क्षमा शीलतासे क्षमा अपना नाम सार्थक कर सकी है। भारतकी पवित्र गोदमें पलकर तुम्हारी जैसी सती स्त्रीयोंने माताके दूधकी लाज रख ली है। स्त्रीयोंका क्षमाशीला होनाही सौभाग्यका लक्षण कहा जाता है।

महर्षि वशिष्ठने भी पुत्र-घाती विश्वामित्रको क्षमा कर दी, किन्तु तो भी उनके हृदयकी द्वेषाग्नि ठंडी नहीं हो पायी। घोर तपस्या कर अच्छी स्थिति प्राप्त करनेपर भी उनके हृदयमें वशिष्ठ जीको सतानेकी इच्छा बनीही रही।

एक दिन महर्षि वशिष्ठ अपनी धर्म पत्नी अरुन्धतीके साथ आश्रममें बैठे आपसमें इस प्रकार बातें कर रहे थे।

अरुन्धती—नाथ! इन दिनों ऋषियोंमें अधिक चमत्कारी तेजस्वी कौन ऋषि हैं?

वशिष्ठ—इसके लिये तुमको दूर नहीं जाना होगा। अभी ऋषि श्रेष्ठ विश्वामित्रजीका तपोबल प्रशंसनीय है। उनका चरित्र बड़ाही निर्मल है।

अरुन्धती—जो हो किन्तु मुझको आपसे बढ़कर कोई दूसरा नहीं दीखता।

वशिष्ठ—तुम पतिव्रता सती हो, इसलिये तुमको ऐसा मालूम होता है। पतिव्रताओंकी दृष्टिमें पतिसे श्रेष्ठ कोई नहीं जंचता। अतएव तुम जो कुछ देखती हो वह पतिव्रताओंकी स्वाभाविकता कारण है, किन्तु इसको भी स्मरण रखो यह

एकसे एक उत्तम रत्न छिपे पड़े हैं। ऋषियोंमें भी अनेक ऐसे हैं जो उनकी समता नहीं रखते।

अरुन्धती—इनमेंसे किसी दो चारका नाम तो बताइये।

वशिष्ठ—बहुत तो, इसके लिये दूर नहीं जाना होगा चिर-परिचित विश्वामित्रजीको ही देखो। उनके समान तेजस्वी ऋषि बहुत कम होंगे।

जिस समय दम्पतिमें इस प्रकार बातें हो रही थीं उस समय तलवार हाथमें लिये विश्वामित्रजी वशिष्ठजीको मारनेके लिये आश्रमकी लताओंकी ओटमें छिपकर सब सुन रहे थे।

दम्पतिकी बातें ध्यान पूर्वक सुननेके बाद एकाएक वे वशिष्ठजीके आगे उपस्थित हो, तलवार फेंक, चरणोंपर गिरकर बोले "ऋषिराज वशिष्ठजी! मैं आजतक भूलमें ही पड़ा हुआ था। आपको अभीतक पहचान नहीं सका था। अभी मैं आपका गला काटनेके लिये अन्धेरेमें छिपकर यहां आया था। किन्तु आपकी बातोंसे मेरी आंखें खुलीं। आप साक्षात क्षमा रूप हैं। आपके गुणोंका वर्णन मैं नहीं कर सकता। आपकी धर्मपत्नी भगवती अरुन्धतीकी स्वामी-भक्ति किसी पतिव्रतामें नहीं पायी जाती है। आपके चरणोंमें कोटि कोटि प्रणामके पश्चात निवेदन है कि मेरी त्रुटियों पर ध्यान न देकर पिछले अपराधोंको क्षमा कीजिये।"

वशिष्ठजीने प्रेम पूर्वक विश्वामित्रजीको उठा छातीसे लगाकर [illegible] कहा विश्वामित्र आप धन्य हो।"

[illegible] आपका बहुत [illegible] हूँ [illegible]

तक आप मुझे क्षमा न कर दें, तबतक आपका चरण कमल छोड़ूगा नहीं ।

वशिष्ठ—महर्षि विश्वामित्रजी ! विश्वास करो, मेरे हृदयमें पहली बातोंकी चोट नहीं है और न कभी उस ओर ध्यानही दिया करता हूं । । आप जिसके लिये क्षमा मांगते हैं उसका लेश मात्र दुख मेरे मनमें नहीं है ।

विश्वामित्रजी अरुन्धतीके आगे हाथ जोड़कर बोले—"सती मेरे व्यवहारसे तुम्हारे हृदयको बहुत दुख हुआ होगा । मैंने द्वेष बुद्धिमें पड़कर, क्रोधके वशीभूत हो, तुम्हारे पुत्रका संहार किया । यद्यपि मेरा यह अपराध अक्षम्य है, किन्तु सतियोंकी दयालुताके आगे यह भी मार्जनीय है । आशा है इस अकारण क्रोधीकी प्रार्थनापर ध्यान दोगी ।"

अरुन्धती शांत स्वरसे बोली—"ऋषिवर ! आप स्वयं सज्ञान हैं, आपसे इस विषयमें और क्या कह सकती हूं ? आप अपने किये पर पश्चाताप करते हैं, आपके लिये यही प्रायश्चित है । अकालही में पुत्रके स्वर्गवास हो जानेका दुःख मुझको अवश्य है किन्तु इसके लिये आपको दोषी नहीं ठहराती । जीव अपनी करनीका फल पाया करता है । पूर्व जन्ममें मेरा ऐसा कोई दुष्कर्म अवश्य होगा जिसके फल स्वरूप यातना भोगनी पड़ी ।"

विश्वामित्र—धन्य सती ! तुम्हारी क्षमा अनुकरणीय है । ईश्वर करें तुम्हारे जैसी स्त्रीयोंसे देश पूर्ण हो, तभी संसारकी यथार्थ भलाई हो सकेगी ।

कुछ समयतक महर्षि वशिष्ठके साथ बातें करने बाद विश्वामित्रजीने उनसे विदाकी आज्ञा मांगी। वशिष्ठजीने बड़े स्नेहसे उन्हें गले लगा विदा किया। मार्गमें विश्वामित्रजी दम्पत्तिकी प्रशंसा आपही आप करते आश्रमको लौट आये।

पतिव्रता अरुन्धतीके पुनीत यशकी गाथा संसारमें विख्यात हो गयी अनेक आर्य महिलायें उनकी पवित्र और अनुकरणीय पतिभक्तिसे अपने नारी जन्मको सार्थक कर सकीं।

•समाप्त•

तक आप मुझे क्षमा न कर दें, तबतक आपका चरण कमल छोड़ूंगा नहीं ।

वशिष्ठ—महर्षि विश्वामित्रजी ! विश्वास रखें, मेरे हृदयमें पहली बातोंकी चोट नहीं है और न कभी उस ओर ध्यानही दिया करता हूं ।। आप जिसके लिये क्षमा प्रार्थी हैं उसका लेश मात्र दुख मेरे मनमें नहीं है ।

विश्वामित्रजी अरुन्धतीके आगे हाथ जोड़कर बोले—"सती मेरे व्यवहारसे तुम्हारे हृदयको बहुत दुख हुआ होगा । मैंने द्वेष बुद्धिमें पड़कर, क्रोधके वशीभूत हो, तुम्हारे पुत्रका संहार किया । यद्यपि मेरा यह अपराध अक्षम्य है, किन्तु सतियोंकी दयालुताके आगे यह भी मार्जनीय है । आशा है इस अकारण क्रोधीकी प्रार्थनापर ध्यान दोगी ।"

अरुन्धती शांत स्वरसे बोली—"ऋषिवर ! आप स्वयं सज्ञान हैं, आपसे इस विषयमें और क्या कह सकती हूं ? आप अपने किये पर पश्चाताप करते हैं, आपके लिये यही प्रायश्चित है । अकालही में पुत्रके स्वर्गवास हो जानेका दुःख मुझको अवश्य है किन्तु इसके लिये आपको दोषी नहीं ठहराती । जीव अपनी करनीका फल पाया करता है । पूर्व जन्ममें मेरा ऐसा कोई दुष्कर्म अव होगा जिसके फल स्वरूप यातना भोगनी पड़ी ।"

विश्वामित्र—धन्य सती ! तुम्हारी क्षमा अनुकरणीय है ईश्वर करें तुम्हारे जैसी स्त्री[illegible] पूर्ण हो, तभी संसार[illegible] यथार्थ भलाई हो

प्रहसन वाटिका का प्रथम पुष्प

रेशमी रूमाल।

नाटक क्या है? मनोरञ्जनकी पूर्ण सामग्री है। प्रेमकी साक्षात प्रतिमा है। करुण-क्रन्दनका आश्चर्यकारी पर्वत है। अनेक नाट्य गुणोंसे यह नाटक परिपूर्ण है। इस प्रहसनको कलकत्तेकी प्रायः सभी कम्पनियां समय-समयपर खेलकर जनताका खूब ही मनोरंजन करतीं और साथ ही लाखों रुपये पैदा करतीं हैं। रङ्ग विरंगे चित्रोंसे सुसज्जित तृतीय संस्करणका मूल्य ॥)

प्रहसन वाटिकाका द्वितीयपुष्प—

धर्मावतार।

धर्मावतारका दूसरा नाम 'लट्ठमार' है। घुरहू चमारका "इहौ परमेसुरके माया है" और पं० पवित्राचार्यका "यह भी हिन्दू धरमका शान है।" नामक पद समय-समयपर बड़ा ही आनन्द लाते हैं। इस प्रहसनमें अछूतोद्धारका अनेक सिद्धान्तों द्वारा रोचकताके साथ समर्थन किया गया है। प्रहसन बड़ा ही मज़ेदार है, शिक्षाके साथ-ही-साथ इसमें मनोरंजन भी कूट-कूट-कर भरा है। अनेक रङ्ग विरंगे चित्रोंके साथ पुस्तकका मूल्य ॥)

स्त्री चरित्रका भण्डाफोड़—

उपन्यास क्या है, मानों शिक्षाओंका जीता जागता चित्र है। यह पुस्तक हिन्दी साहित्यमें बिलकुल नई, बेजोड़ और अपने ढङ्गकी निराली है। इसकी घटना बड़ी मनोरंजक और वर्णन-शैली अत्यन्त हृदयग्राही है। यह आश्चर्यजनक व्यापारोंसे भरा और लोमहर्षण भीषण काण्डोंमें डूबा हुआ इतना दिलचस्प और अनूठा उपन्यास है कि पढ़ते-पढ़ते कभी आश्चर्यित, रोमाञ्चित और कभी पुलकित हो जाना पड़ता है। इसमें चोरी, बदमाशी डकैती, जालसाजी खून खराबी तथा जासूसी आदि अनेक रोंगटे खड़े कर देनेवाली घटनायें आदिसे अन्ततक भरी है।

इसमें रमणी रहस्यका पूरा भण्डाफोड़ है, एक ओर प्रेम और सतीत्वका साक्षात प्रतिमा सुशीला और दूसरी ओर निष्ठुरता तथा जालसाजिनी पथ-भ्रष्टा सुन्दरीका चरित्र बड़ी ही उत्तमतासे चित्रित किया गया है। दोनोंकी समतामें आकाश पातालका अन्तर है, यह बड़ीही अद्भुत और विचित्र घटनाओंसे बनाया गया है। ऐसी रहस्य भरी और भेद-भरी पुस्तकको पढ़कर [illegible] भूख [illegible] भी [illegible] है। हमारी निजी सलाह है कि इस पुस्तकको एक बार अवश्य पढ़ें। लगभग ५५० पृष्ठ और रङ्ग बिरङ्गे १४ चित्रोंसे परिपूर्ण पुस्तकका मूल्य ३।)

स्वास्थ्य लाभका विचित्र आविष्कार

जल-चिकत्सा

या

हाइड्रो पैथी

लीजिये! अब आपको वैद्यों, डाक्टरों और हकीमोंका मुंह न ताकना पड़ेगा। उन महाप्रभुओंकी कदम पोशीमें अपने धनका धारा-प्रवाह न करना पड़ेगा। आप स्वतः मिट्टी, जल, उत्ताप (आग या धूप) वायु और आकाशकी सहायतासे जर्मन डाक्टर लुईकूने, विलसन, जूस्ट, फादरनिप, अमेरिकन डाक्टर लिएडलेयर योगी रामचरक और महात्मा गान्धी आदि द्वारा दिखाये हुए पथके आधार पर मामूली सर्दी, बुखारसे लेकर दुसाध्य क्षय-कास, केन्सर, न्यूमोनिया, डिपथेरिया, टाइफायड इत्यादि अनेक भीषण बीमारियोंकी स्वाभाविक चिकित्सा बिना दवा और बिना चीर फाड़के सहज ही कर सकेंगे। हजारों प्रशंसा पत्र इस पुस्तकपर प्राप्त हुए हैं। अनेक प्रशंसा पत्र पुस्तकके अन्त में भी दिये गये हैं। पुस्तक प्रत्येक मनुष्यके लिये उपयोगी है। यदि आप स्वास्थ्यमय जीवन चाहते हैं तो इस पुस्तकको जरूर मंगाइये। मूल्य १॥) मात्र।

रुपये कमानेकी मशीन

इस पुस्तकमें सुगन्धदार तैल, साबुन, पोमेटम, लाईमजूस, कास्मेटिक पोमेन्ट, सुगन्धदार टिकिया, ओटो, सेन्ट, लवेण्डर, गुलाब जल, कोलन वाटर, फूलोंसे इत्र निकालना, सब प्रकारकी रोशनाइयां मारकिङ्ग इङ्क, वार्निस, पालिश, पेपर, दांतमंजन, खिजाब, सुगन्धित पौडर, ताम्बुल बिहार, पानका मसाला, मसालेकी सुपारी, शर्बत, चांदी सोनाकी कलई, काला नमक आदि अनेक प्रकारकी ताकती और मामर्शोकी धातु-पुष्ट दवा बनानेकी बिधियां लिखी गई है। इस पुस्तककी प्रशंसा भारतके प्रायः सभी पत्रोंने मुक्त कण्ठसेकी है। जो लोग टकेटकेकी नौकरीके लिये गली-गली मारे-मारे फिरते हैं, वे यदि इस पुस्तकमें बतलायी विधिके अनुसार तेल साबुन इत्यादि बनाकर व्यापार करें तो सैकड़ों रुपया महीना मजेमें पैदा कर सकते हैं। यह पुस्तक अमीरों और शौकीनोंके भी बड़े कामकी है। इस पुस्तक द्वारा आज अनेकों सज्जन अपना निजी व्यापार खोल बैठे हैं और काफी आमदनी कर रहे हैं। कितने ही खुद अपने लिये साफ और शुद्ध तेल साबुन एवं दवा बनाकर लाभ उठा रहे हैं। हमारा आपसे अनुरोध है कि इस पुस्तकको मंगाकर आप अपने पास अवश्य रखिये। इस पुस्तकके सहारे आप द्वारा दूसरेका भी भला हो जायगा। शीघ्रता करें, बहुत कम कांपियां बची हैं, मूल्य १॥) रेशमी जिल्द २)

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका प्रथम पुष्प—

पतिव्रता अरुन्धती

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका द्वितीय पुष्प—

सती सीमंतिनी

इसमें महाराज चित्रवर्मा की सुशीला कन्या या महाराज नलके पौत्र कुमार चन्द्रांगदकी अर्धाङ्गिनी सती सीमंतिनीकी पातिव्रत्य कथायुक्त चरित्र-चित्रण किया गया है। सती कुल-शिरोमणि सीमंतिनीका चरित्र किसी भी पतिव्रतासे कम दर्जेका नहीं है। सती सावित्रीकी तरह इस सतीबालाने भी अपने पातिव्रत्यके प्रभावसे पतिको पुनर्जन्म दिलाया था। इस पुस्तकमें रहस्यभरी गुणभरी, भक्तिभरी और आदर्श भरी अनेक ललित घटनायें हैं। सती सीमंतिनीने अलौकिक लीला और आदर्श पतिपरायणतासे उस युगमें सर्वोत्तम पद प्राप्त किया था। हिन्दू बालक बालिकाओं और गृहलक्ष्मियोंके पढ़ने तथा पुस्तकालयोंमें संग्रह करने योग्य अपने ढङ्गकी निराली और अति उत्तम पुस्तक है। क्या भाषा, क्या भाव, क्या विषय, क्या कागज, क्या छपाई, क्या चित्र सभी के लिहाजसे यह पुस्तक अपूर्व है। जो लोग स्त्री शिक्षाके पक्षपाती नहीं हैं वे आखें उठाकर इस पुस्तकको अवश्य मंगाकर पढ़ें। सीमंतिनीका अपूर्व धर्मानुराग, उज्ज्वल सतीत्व और अविचल धैर्यकी कथा पढ़कर आत्मामें अलौकिक बलका सञ्चार होता है। रङ्ग बिरंगे चित्रों सहित संशोधित और सम्पादित द्वितीय संस्करणका मूल्य ॥)

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका तृतीय पुष्प—

सती सुलक्षणा।

इसमें देवलोक और मृत्युलोकका चित्र दिखानेवाला शिक्षाप्रद सुललित और हृदय-ग्राही अपूर्व कथा है। हिन्दू संसारकी बिलकुल अपरिचिता, "सती सुलक्षणा" में पौराणिक समयकी अनेकों घटना, भाव और भाषाकी अद्भुत छटा देखने और पढ़ने योग्य है। इसमें स्त्री शिक्षाका अपूर्व उदाहरण पातिव्रत्यका ज्वलन्त प्रमाण धर्म तथा सत्यव्रतका सुन्दर आदर्श और सती माताओंका चमत्कार है। यह वही सतीबाला है जिसने अपने कुष्ठ रोग पीड़ित पतिकी तन-मनसे अपूर्व सेवा की थी जिसने पतिकी इच्छा पूर्तिके लिए वेश्याके यहां दासीका कार्य कर उसे प्रसन्न किया था जिसने ऋषि श्रेष्ठ माण्डव्यके शापसे अपने पतिको सूर्योदयके पूर्व मरते देख पातिव्रत्यके तेजसे सूर्योदय ही बन्द कर दिया था। देवताओंका आर्तनाद एवं सती अनुसूयाके उपदेशसे सूर्योदय कराया और अपने पूज्य पतिको निरोग एवं मृत्युके मुखसे साफ बचा लिया था इसमें सती अनुसूयाके उपदेश आर्य ललनाओंके लिए अनुकरणीय हैं। यह पुस्तक लड़कियोंको उपहारमें देने और पुस्तकालयोंमें संग्रह करने योग्य अति उत्तम वस्तु है। रङ्ग बिरंगे चित्रोंसे परिपूर्ण द्वितीय संस्करणका मूल्य ॥)

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका चतुर्थ पुष्प—

पतिव्रता रुक्मिणी।

महिला संसारका शृङ्गार, प्रेम, भक्ति, और शान्ति जल-पूर्ण सरिता से भूषित अलङ्कार भगवान श्रीकृष्णचन्द्रकी हृदयेश्वरी पतिव्रता रुक्मिणीका चरित्र कौन नहीं पढ़ना चाहेगा? इस पुस्तकमें इसी सती साध्वी का चरित्र-चित्रण किया गया है। इसमें श्रीकृष्ण और रुक्मिणी का अगाध प्रेम देखकर आप प्रेम-सागरमें गोते खाने लगेंगे। रुक्मिणीके विवाहमें रुक्मीकी क्रूरता, रुक्मिणी-हरण, शिशुपाल आदि राजाओंका रुक्मिणी-हरणमें अकारण क्रोध और घमासान युद्ध, प्रद्युम्न-दर्शन रुक्मी-वध आदि वृतान्त पढ़ने योग्य हैं। पति-भक्ति क्या पदार्थ है, अलौकिक प्रेमका कैसा रहस्य और चमत्कार है, पुस्तकके देखनेपर ही मालूम होगा। आदिसे अन्ततक भाव पूर्ण विषय बड़ी ही सरस और सरल भाषा में लिखे गये हैं। हम दावेके साथ कह सकते हैं कि यह पुस्तक कन्या, गृहिणी और कुल वधुओंके लिये तथा पुस्तकालयों मे संग्रह करने योग्य अति उत्तम है। यदि आप चाहते हैं कि घर-घर, गांव-गांव आदर्श दम्पति, आदर्श गृहस्थ, आदर्श समाज, आदर्श गृहिणी और आदर्श महात्मा नजर आवें तो इस पुस्तकको अवश्य मंगाइए। अनेक रङ्ग-बिरंगे चित्रोंसे शोभित संशोधित और सम्पादित द्वितिय संस्करणका मुल्य ॥)

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका पञ्चम पुष्प —

जिस पतिव्रता शिरोमणि महासती वृन्दाकी पवित्र स्वामि-भक्ति, उज्वल सतीत्व, अविचल धैर्य तथा धर्मनिष्ठाके प्रतापसे आज भी भारत का पुरातन नारी समाज पौराणिक साहित्यमें ऊंचा मस्तक किये हुए है। जिनकी पवित्र गाथा घर घरमें प्रचलित होते हुए भी अलोप है, जिनकी पवित्र पूजा कर आज भी भारत की नारियां अपना सौभाग्य मानती हैं, जिस "तुलसी-वृक्ष" को लोग आज भी अपने घर में रखकर श्रद्धा और भक्ति से पूजन करते तथा कार्तिक मास में दीपक जलाकर शुभ कामनायें वर पाने की अभिलाषा रखते हैं- चक्रधर भगवान विष्णुके पूजनमें भी 'तुलसी' उनके मस्तक पर चढ़ाई जाती और वही आज भारत के स्त्री पुरुषोंको प्रसाद स्वरूप में प्राप्त होती है। यह तुलसी के पत्ते उसी जलन्धर पत्नी महासती वृन्दाके सतीत्व की प्रसादी है। जलन्धर का जन्म, भयङ्कर अत्याचार, देवासुर संग्राम, नारद की कूटनीति, कैलाशपर चढ़ाई, सती का सत भङ्ग एवं उसका चितारोहण और 'तुलसी वृक्ष' की उत्पत्ति आदि दृश्य बड़ी ही सरल भाषा में लिखे गये हैं। अनेक रङ्ग बिरंगे चित्रों सहित संशोधित और सम्वर्द्धित द्वितीय संस्करण का मूल्य १)

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका षष्ट पुष्प—

पौराणिक समय की पूजनीया, सतियों की पथ-प्रदर्शिका, आस्तिक की आदर्श जननी, ऋषि श्रेष्ठ जरत्कारुकी धर्म-पत्नी भगवती मनसा का चरित्र कौन नहीं पढ़ना चाहेगा? मनसा की पति-भक्ति आदर्श है। मनसाका पति-प्रेम और त्याग प्रसंसनीय है। मनसा का दिया हुआ उपदेश भारतीय समाज में आज भी श्रद्धा और भक्तिके साथ श्रवण किया जाता है। इस पुस्तक में मनसा की पति सेवा, मनसाकी घोर तपस्या, सती-सामर्थ्य, पुत्र लाभ, आस्तिक द्वारा नागोंकी रक्षा, मनसा-पूजा प्रचार आदि दृश्य बड़े ही मनोरंजक और उपदेशप्रद हैं। इसमें भगवती मनसा के अतिरिक्त मोहिनी और बेहुला नामक दो प्रधान सतियों के सत का भी बड़ी खूबी के साथ दिग्दर्शन कराया गया है। यह पुस्तक भारतीय रमणियों के गले का रत्न-जड़ित हार है। इसलिये हम डंके की चोट कहते हैं कि महिला साहित्य पढ़ने वालोंके लिए यह ग्रन्थ भी आदर्श का खजाना है। हमारा अनुरोध है कि इस पुस्तक को स्वतः पढ़िये तथा अपने परिवार को पढ़ाइये। रंग-बिरंगे चित्रोंके साथ संशोधित और सम्पादित द्वितीय संस्करणका मूल्य ॥)

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका अष्टम पुष्प—

सती ऊषा

ऐसा कौन भारतवासी होगा जो योगीराज भगवान श्री कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द के परिवार से परिचित न हो। इस पुस्तक में श्री कृष्णचन्द्र के पौत्र अथवा महावीर प्रद्युम्न-तनय कुमार अनिरुद्धकी प्रिय पत्नी या दानवीर बलि के ज्येष्ठ पुत्र वीराग्रगण्य विजयी सम्राट बाणासुर की दुलारी बेटी "सती ऊषा" का चरित्र चित्रित किया गया है। इस पुस्तककी लेखन शैली अत्यन्त सरल और हृदयग्राही है। इसमें ऊषा का पर-त्याग, स्वप्न-दर्शन, प्रेम-मिलन, अनिरुद्धका युद्ध-कौशल, कारागार, यादवोंकी चढ़ाई, सात्यकी का दूतत्व, दर्प-दलन, उद्धार और विवाह, वज्र-दर्शन और यदुकुल ध्वंस आदि दृश्य देखने एवं पढ़ने योग्य हैं। चित्र पत्लाकी चतुरता, वियोग दुःख, स्त्री कर्त्तव्य, सृष्टि संहारी महादेवको भयंकरता आदि मनन करने लायक है। प्रत्येक स्थलपर नीति और कार्य कुशलता की झलक दिखायी देती है, यह पुस्तक श्रीकृष्णके परिवारका संक्षिप्त इतिहास है। ऐसी उपयोगी सचित्र संशोधित और संपादित पुस्तकका मूल्य ॥)

आदर्श रमणी-रत्न-मालाका नवम पुष्प—

यह आर्यावर्त्त के दक्षिण-स्थित लंका द्वीप के वीराग्रगण्य विजयी सम्राट रावण के सुयोग्य पुत्र महापराक्रमी इन्द्रजीत मेघनाद की पत्नी या नागलोक के राजा की कन्या "सती सुलोचना" है। यह उस बहादुर की स्त्री है, जिसके भय से तीनों लोक और चौदहों भुवन थर-थर कांपते थे, जिस का प्रचण्ड वीरता के कारण इन्द्रादि देवताओं को सम्राट रावण का गुलाम होना पड़ा था। यह पुस्तक उसी की प्रिय पत्नी के अगाध पातिव्रत का द्योतक है। इसमें सती सुलोचना के उन पाण्डित्य पूर्ण विचारों का धारा प्रवाह है, जिस में भारतीय नारियां स्नान कर पवित्र होसकती हैं। सुलोचना पतिपरायणता, नारी-कर्त्तव्य, सती-धर्म और विश्व-प्रेम की जगमगाती हुई उज्वल और अमूल्य प्रतिमा है। इसके पढ़ने से इतिहास, पुराण और उपन्यास आदि अनेक विषयों का आनन्द आता है। इस के पढ़ने से पुरुष वीर, धीर, संयमी और सदाचारी होंगे तथा स्त्रियां पतिव्रता और धर्म परायण बनकर अपने कुल की मर्यादा को गौरवान्वित करेंगी। पुस्तक बहु-बेटियों और बालक-बालिकाओं को उपहार देने योग्य सर्वाङ्ग सुन्दर है। अनेक रंग बिरंगे चित्रोंसे सुशोभित पुस्तकका मूल्य१।)

प्रथम भाग

इस भागमें उन पञ्च-महासतियोंका चारुचरित्र चित्रित किया गया है, जिन्होंने अपने अखण्ड पातिव्रत्य से आर्यावर्तका मुखोज्वल किया था। उन्हीं अनुसूया, सीता, सावित्री दमयन्ती और पार्वतीका चरित्र बड़ी ही सरल और सुललित भषामें लिखा गया है। पौराणिक काल से लेकर आजतक की असंख्य पतिव्रताओंमें इन पञ्च महासतियोंका स्थान सर्वोच्च माना गया है। इनकी समताकी दूसरी सती इस धरा धामपर अवतीर्ण नहीं हुई हैं। अनेक रंग बिरंगे चित्रोंसे सुसज्जित संशोधित और सम्पादित संस्करणका मूल्य १)